Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

अन्दर पढ़िए

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काक्रोच	३
—सुरजीत	
विकिरण और हमारा शरीर	७
—प्रेमानन्द चन्दोला	
जीवों में समय-बोध	१३
—देवेन मेवाड़ी	
पेय पादपों में काफी तथा चाय	१८
—जगदीशचन्द्र	
दुग्ध निर्माण और स्राव	२३
—डा. महेश्वरसिंह सूद	
आपेक्षिकता	२९
—सूर्यदेव पाण्डेय	
क्या विज्ञान मानवता को नष्ट कर देगा ?	३५
—वी. वी. गिरि	

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां	२२
प्रश्न-वृत्त	३४
विज्ञान-बोध (फ्लू)	४०

अपनी बात

हाल ही में सोवियत वैज्ञानिकों ने यह मत व्यक्त किया है कि मानव को अन्तरिक्ष में लम्बी यात्रा पर भेजकर जोखिम उठाने का समय अभी नहीं आया है। लेकिन इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि तीन अमरीकी अन्तरिक्षयात्री चन्द्रमा की परिक्रमा करके सकुशल लौट आये हैं। हो सकता है, रूस चन्द्रमा पर नहीं जाना चाहता; और यह भी हो सकता है कि वह अपने अन्तरिक्ष-यात्रियों को मंगल या शुक्र पर उतारने की तकनीकी जानकारी हासिल करने में लगा हो, क्योंकि यह बात सोवियत वैज्ञानिकों की इस घोषणा से स्पष्ट-सी लगती है कि वे एक ऐसे स्वचालित अन्तरिक्षयान के निर्माण में लगे हैं जो अन्तरिक्षयात्रियों के यात्रा के दौरान काम करने में असमर्थ हो जाने पर भी उन्हें लौटा लायेगा।

फिर भी यह तो मानना ही होगा कि अमरीकी अन्तरिक्षयात्रियों ने चन्द्रमा की परिक्रमा करने के बाद वापस आकर अन्तरिक्षयात्रा के क्षेत्र में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है। उनके साहस की जितनी भी सराहना की जाय कम है।

हम यह आशा कर सकते हैं कि निकट भविष्य में अमरीकी अन्तरिक्षयात्री चन्द्रमा के धरातल पर उतरेंगे और सकुशल लौट आयेंगे। उनकी यह सफलता अन्तरिक्ष अनुसंधान को निश्चय ही एक नयी दिशा देगी।

वर्ष ९   अंक १२

विज्ञान लोक

प्रति : ७५ पैसे

: ९ रुपये

सम्पादक : शंकर मेहरा

प्रकाशक : मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा-३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

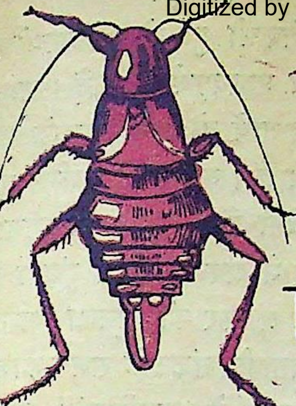

काक्रोच
जिसकी उम्र ३५ करोड़ वर्ष है

सुरजीत

काक्रोच जिसे, हम तिलचिट्टा कहते हैं, पृथ्वी पर बसने वाले प्राचीनतम जीवों में है। १७ करोड़ वर्ष पहले जब भूमण्डल पर दैत्यकाय जन्तुओं का युग आरम्भ हुआ, जिन्हें हम देनोसारस के नाम से याद करते हैं, तो यह नन्हा-सा कीटा उनका स्वागत करने के लिए मौजूद था। प्रकृति में भौगोलिक परिवर्तन होते रहे। ग्लैशियर पिघलते रहे, आंधियां, तूफान, वर्षा और बिजली अपना प्रभाव दिखाती रहीं। जल का स्थान पृथ्वी और पृथ्वी का स्थान जल लेता रहा, किन्तु कठोर शरीर काक्रोच पर इन परिवर्तनों का बिलकुल प्रभाव न पड़ा। वैज्ञानिकों का कथन है कि उसकी छोटी-छोटी तेज आंखें ३५ करोड़ वर्ष से प्रकृति के परिवर्तनों का अध्ययन कर रही हैं।

काक्रोच का रहन-सहन

काक्रोच बला का सख्त-जान है। पतेत हुए मरुस्थलों से लेकर अति शीत और वर्फानी प्रदेशों तक में पाया जाता है। घरों में पुस्तकों, कापियों, मेजों, कुर्सियों, और घरेलू उपयोग की अन्य वस्तुओं में प्रायः छिपा रहता है, यहां तक कि कई बार रेडियो को खोलें तो अन्दर से निकल कर भाग जाता है। इसकी ३५०० से अधिक किस्में हैं। इनमें से केवल एक प्रतिशत घरों में मिलती है। शेष ६६ प्रतिशत खुले मैदानों में, नहरी इलाकों, और वनों आदि में रहती हैं और पक्षियों तथा जानवरों के सुरक्षित आहार पर हाथ साफ करती हैं। काक्रोच के कठोर शरीर का एक बड़ा कारण यह भी है कि यह हर चीज खा जाता है। पौधों की कोपलें, जूते, पुरानी चीजों पर लगी हुई फफूंदी, कपड़ों पर मक्खन और घी के दाग, वार्निश, कपड़ा धोने का साबुन, नर्म लकड़ी आदि इसका मनभाता भोजन है। यहां तक कि यह अपनी उतारी हुई खाल तक चट कर जाता है। भूखा हो, तो अपने अण्डे तक खाने से नहीं चूकता। इसका उदर बड़ा शक्तिशाली है और इसमें कई ऐसे पाचक रस होते हैं, जिनकी सहायता से सख्त लकड़ी तक को यह पचा लेता है। काक्रोच एक माह तक भोजन और पानी के बिना जीवित रह सकता है। दो माह तक केवल पानी पर गुजारा कर सकता है। पांच माह तक केवल खुश्क आहार मिलता रहे, तो भी जीवित रहता है। हमारे यहां मकानों, दूकानों और फसलों के अतिरिक्त काक्रोच गाड़ियों में भी आम मिलता है। गाड़ी के डिब्बों में सीटों के नीचे और दरारों में इसीके कबीले के कबीले आबाद रहते हैं जो यात्रियों की फेंकी हुई गंडेरियों, मूंगफली के छिलकों, कागज के पुरजों और रोटी के टुकड़ों पर गुजारा करते हैं।

काक्रोच से सामान्यतः दुर्गंध के कारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घृणा की जाती है। यह दुर्गन्ध उसके बचाव का एक साधन है और शरीर की कई ग्रंथियों से निकलती है। बहुत से कीड़े-मकोड़े खाने वाले जानवर केवल दुर्गन्ध के कारण काक्रोच को नहीं खाते। परन्तु वास्तव में काक्रोच बहुत साफ जानवर है। नियमितता से "मेक-ग्रप" करता है और ग्रपने हाथ-पांव और मूंछें ग्रादि साफ करने में कई घंटे लगाता है।

सामान्यतः यह कहा जाता है कि काक्रोच हैज़ा और टाइफाइड के कीटाणु फैलाता है। वैज्ञानिकों की दृष्टि में यह एक निराधार ग्रारोप है जिसका सत्य से कोई संबंध नहीं। वनों में रहने वाले कई काक्रोच ग्राकृति में छोटे पक्षियों के समान होते हैं। उनके शरीर की लम्बाई ढाई से तीन इंच होती है। दोनों ओर सात इंच तक फैले हुए पंख होते हैं। कई किस्में चावल के दाने से भी छोटी हैं। रंग सामान्यतः भूरा होता है। कई किस्मों में विभिन्न रंग पाये जाते हैं। पंख सब के होते हैं जिनकी सहायता से वे उड़ सकते हैं, किन्तु सामान्यतः ग्रपनी टांगों के द्वारा हरकत करते हैं। टांगें मजबूत और संख्या में छह होती हैं।

काक्रोच बला का सख्त-जान है। तपते हुए मरुस्थलों से लेकर अति शीत और बर्फानी प्रदेशों तक में पाया जाता है। भूखा हो तो अपने अण्डे तक खाने से नहीं चूकता; और पाँच माह तक इसे पानी के बिना केवल खुश्क आहार मिलता रहे तो भी जीवित रहता है

दो मूंछें : अत्यन्त महत्वपूर्ण

ग्रागे को निकली हुई दो मूंछें काक्रोच के शरीर का सबसे महत्वपूर्ण भाग हैं। लम्बाई की ओर से देखा जाये तो ये मूंछें उसके शरीर से ग्रधिक लम्बी हैं। यह सम्वेदनशील एरियल का काम देती हैं। इनकी सहायता से काक्रोच अंधेरे में ग्रपना रास्ता ढूंढ़ता है। मूंछों ही से वह ग्राहार की सुगन्ध पाता है और ग्रावाजें सुनता है। संकट के समय काक्रोच ग्रपनी पिछली टांगों से "दुलत्तियां" झाड़ता है और शत्रु को भगा देता है।

दिन भर काक्रोच बिल में रहता है। सामान्यतः रात के समय बाहर निकलता है। अंधेरे में ग्रपने-ग्रापको बहुत सुरक्षित समझता है। उसके सिर पर तीन सामान्य ग्रांखें और दो संयुक्त ग्रांखें होती हैं। यही कारण है कि यह दूर-दूर तक देख सकता है। वैसे यदि इसे अंधा कर दिया जाये, तो भी किसी न किसी तरह रोशनी को पहचान लेता है। मूंछें इसका पथ-प्रदर्शन करती हैं, और दैनिक जीवन के कार्य सम्पन्न करने में इसे बहुत सहायता देती हैं।

ऊपर हमने काक्रोच की सख्त-जान होने का जिक्र किया था। इस संबंध में यह बताना दिलचस्पी से खाली न होगा कि यदि इसे बर्फ में दबा दिया जाये तो बर्फ पिघलने पर भाग खड़ा होता है। कई बार यदि ग्राप इस पर पांव रख दें तो भी यह नहीं मरता और जैसे ही पांव उठाया जाये, सही सलामत ग्रपने घर चल देता है। ग्रावश्यकता के समय यह ग्रपने शरीर को सिकोड़ लेता है। इस विशेषता के कारण काक्रोच ग्रपने शरीर से कहीं छोटे सूराखों में भी घुस जाता है।

काक्रोच बहुत तेजी से ग्रपनी नस्ल फैलाता है। मादा ३०३ दिनों में १८० ग्रण्डे देती है। बच्चे एक माह में जवान हो जाते हैं और पुनः नस्ल बढ़ाने लगते हैं। औसत उम्र एक वर्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। उपयुक्त अवस्थाओं में इसकी नस्ल बहुत तेजी से बढ़ती है। एक बार रूसी कीटाणु विशेषज्ञों ने एक खोह में से ४,७५,००० मुरदा काक्रोच निकाले जो केवल एक जोड़े की औलाद थे। मादा काक्रोच बहुत स्नेहशील मां है। कई किस्मों में मां अण्डे को अपने शरीर के अन्दर रखती है और वहीं उसमें से बच्चा निकलता है, किन्तु अधिकांश किस्में अण्डों को एक बटुए जैसी शक्ल के थैलों में सुरक्षित रखती हैं। यह थैला मादा के पेट से चिपका रहता है। बच्चे निकलने का समय निकट आये तो मादा इन थैलों को किसी ऐसे स्थान में छिपा देती है जहां आहार निकट हो। बच्चे आहार के बिना एक सप्ताह तक जीवित रह सकते हैं।

नर काक्रोच के पंख मादा की अपेक्षा लम्बे होते हैं। कई किस्मों में मादा के पंख बहुत छोटे होते हैं या सिरे से होते ही नहीं। रंग सामान्यतः भूरा होता है, किन्तु संसार के विभिन्न भागों में खाकी, हलके हरे, काले, नीले और चमकदार सुरमई रंग के काक्रोच भी मिलते हैं। तेज दौड़ में काक्रोच का मुकाबला शायद ही कोई अन्य कीट कर सके। आवश्यकता के समय कई-कई फर्लांग भागता हुआ चला जाता है।

उपर्युक्त गुणों के कारण काक्रोच की ओर वैज्ञानिकों का विशेष ध्यान गया है। कैंसर और हृदय-रोगों पर प्रयोगों के लिए डाक्टर इसका उपयोग करते हैं।

काक्रोच : एक लाभदायक जीव

काक्रोच बहुत लाभदायक जीव है। इसकी बहुत-सी किस्में गले-सड़े पौधे और पेड़ खाकर मानव जाति की सेवा करती हैं, वरना वनों में दुर्गन्ध पैदा हो जाये। फिर भी हम घरों में इसकी उपस्थिति पसन्द नहीं करते। प्रायः लोगों को इसे देखकर घिन आती है। प्रसिद्ध कीटाणु विशेषज्ञ डाक्टर फिलिप

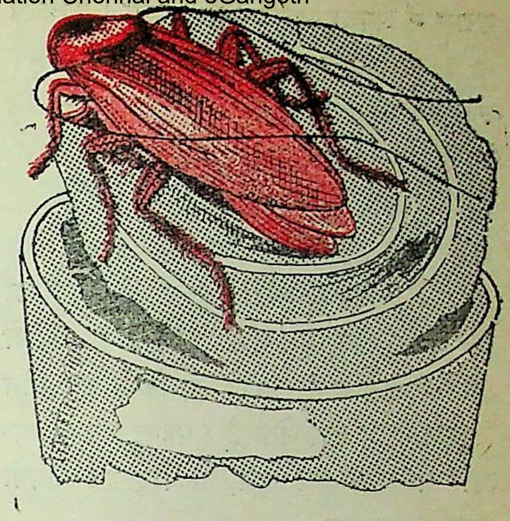

काक्रोच पृथ्वी की ऊपरी तहों की गरमी को मनुष्य से १०० गुना अधिक सहन कर लेता है। इसमें गुरुत्वाकर्षण के विरुद्ध मनुष्य से १० गुना अधिक आत्मरक्षा पायी जाती है

का कहना है कि इसकी नस्ल बहुत तेजी से बढ़ती जा रही है और यदि हम इसकी वर्तमान संख्या को बढ़ने न दें तो यह एक बहुत बड़ा कारनामा होगा। इसे समाप्त करने के लिए सामान्यतः विषैली दवाओं का उपयोग किया जाता है, किन्तु कोई संतोषजनक निष्कर्ष नहीं निकलता। काक्रोच संभवतः एकमात्र जीव है जो जहर का भी आदी हो जाता है। शुरू-शुरू में इसे पीड़ा अवश्य होती है, किन्तु बाद में चाहे कितनी ही दवा क्यों न छिड़की जाये, इसका बाल तक बांका नहीं होता। हम केवल एक तरीके से इसे समाप्त कर सकते हैं। सफाई का खास ध्यान रखा जाये और भोजन को खुला न छोड़ा जाये। हर सप्ताह फर्नीचर, बर्तन, सन्दूक आदि उठाकर उनके नीचे कीटाणुनाशक दवाएं छिड़की जायें, क्योंकि सामान्यतः दिन भर यह इन्हीं चीजों के नीचे छिपा रहता है।

बहुत से कीड़े-मकोड़े अपने विशिष्ट गुणों के कारण प्रसिद्ध हैं। चीटियां प्रबन्ध करने में प्रवीण हैं, तो मधुमक्खियां परिश्रम और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्यम में अपना जवाब नहीं रखता। काक्रोच में प्रकटत: ऐसा कोई गुण नहीं। यह मूक जीवन व्यतीत करता है। न लेना, न देना। अपने काम से काम रखता है। बहुत समझौता-प्रिय है, और उस समय तक किसी दूसरे कीड़े, मकोड़े से नहीं उलझता जब तक इसे छेड़ा न जाये। कई बार तो इसका धैर्य परकाष्ठा तक पहुंच जाता है। भिड़ें और अन्य जहरीले जानवर इसे डकं मारते हैं, किन्तु यह मौन रहकर सहन कर लेता है। परन्तु जब अत्याचार सीमा से बढ़ जाये, तो वीरता से अपनी रक्षा करता है।

मनुष्य से अधिक सहनशील

वैज्ञानिकों का मत है कि काक्रोच पृथ्वी की ऊपरी तहों की गर्मी को मनुष्य से सौ गुना अधिक सहन कर लेता है। इसके अति-[illegible] के विरुद्ध मनुष्य से दस गुना अधिक आत्मरक्षा पायी जाती है। यही कारण है कि इसे दूरस्थ ग्रहों तक भेजने की तैयारियां हो रही हैं। अन्तरिक्ष यात्रा के लिए वैज्ञानिकों ने एक खोल तैयार किया है। यह खोल बीयर के एक खाली डब्बे जैसा है जिसमें मौजूद हवा से काक्रोच कई सप्ताह सांस ले सकता है।

हम ऊपर बता चुके हैं कि काक्रोच कई माह तक आहार और पानी तक के बिना जीवित रह सकता है। इसलिए खोल में आहार की कोई व्यवस्था नहीं की गयी, पर ऐसे यंत्र अवश्य लगाये गये हैं जो उसकी मानसिक और शारीरिक अवस्था को रेडियो तरंगों के द्वारा पृथ्वी तक पहुंचा सकें। इस प्रयोग से मूल्यवान जानकारी मिलने की आशा है। ●

मिट्टी और सीमेण्ट का मिश्रण

ज़ोरहाट की क्षेत्रीय अनुसन्धान प्रयोगशाला ने भवन एवं सड़कों आदि के निर्माण में उपयोगी एक पथरीले कंकरीट का निर्माण किया है जिसमें मिट्टी एवं सीमेण्ट को मिश्रित कर दिया गया है। विशषतः ऐसे निर्माण-कार्यों में जहां भवन अथवा सड़क या तालाबों आदि में सतह को पानी का सामना करना पड़ता है, इस प्रकार के पदार्थ का उपयोग बहुत महत्त्वपूर्ण हो गया है।

प्रयोगशाला में तैयार किये गये इस मिट्टी-सीमेण्ट मिश्रण की विशेषता यह है कि यह प्रचलित पदार्थों की अपेक्षा सस्ता भी पड़ता है। इसके निर्माण में मुख्यत: केवल मिट्टी की ही आवश्यकता पड़ती है जो साधारणतः सभी जगह उपलब्ध होती है। इसके साथ साधारणः किस्म की पोर्टलैण्ड सीमेण्ट का उपयोग किया जाता है। प्रविधि से सम्बन्धित प्रायोगिक संयन्त्र का परीक्षण सफलतापूर्वक किया जा चुका है।

बुढ़ापा दूर भागेगा

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी में इस विषय पर अनुसन्धान किया जा रहा है कि बुढ़ापे को कैसे रोका जा सकता है। सम्भावना है कि इस अनुसन्धान के परिणामस्वरूप ऐसे उपाय ज्ञात हो सकेंगे जिनके द्वारा बुढ़ापे में जवानों की भांति क्रियाशील रहा जा सके और उनके समान कार्य किया जा सके।

ऊंट का दूध : एनीमिया का इलाज

ऊंट के दूध में फोलिक अम्ल का अंश बहुत होता है जिससे विटामिन के रूप में शरीर में रक्त निर्माण होता है। वैज्ञानिकों ने ज्ञात किया है कि ऊंट का दूध एनीमिया के रोगियों के लिए बहुत उपयोगी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकिरण और हमारा शरीर

प्रेमानन्द चन्दोला, एम. एस-सी.

विकिरण का वातावरण और हमारे शरीर पर बहुत प्रभाव पड़ता है। विकिरण किसी भी प्रकार का हो सकता है, अर्थात् नाभिकीय आयुधों अथवा परीक्षणों का, न्यूट्रान, एक्स-रे, गामा-किरणों व अन्य रेडियो सक्रिय उत्पादनों का। सभी विकिरणों का प्रभाव करीब-करीब एक-सा ही होता है लगातार हो रहे नाभिकीय आयुधों और बम परीक्षणों के कारण उत्पन्न होने वाले विकिरण से हमारे शरीर में सीजियम–१३७ और स्ट्रान्शियम–६० नामक प्रमुख रेडियोसक्रिय तत्व तथा वायु व भूमि में बेरियम, लेन्थेनम, स्थेनियम, निओडिमियम और यूरेनियम परमाणु के अन्य आइसोटोप उत्तरोत्तर काफी मात्रा में जमा होते जायेंगे। इनसे शरीर में संदूषणता की वृद्धि होती जायेगी जिसके फलस्वरूप खून और हड्डी के कैंसर तथा अन्य रोग शरीर में घर करते जायेंगे। गुणसूत्र (क्रोमोसोम) व जीनों अर्थात् पैतृकता से सम्बद्ध लक्षणों की वाहक इकाइयों पर इनका गहरा प्रभाव पड़ेगा, जो ऋणात्मक रहेगा।

१९२७ में जीव वैज्ञानिक मुलर ने घोषणा की थी कि उन ड्रोसोफिला में, जिनके पूर्वज विकिरण में रखे गये थे, आनुवंशिक (पैतृक) असामान्यताएं पायी गयीं; और इस घोषणा के बाद अनेक प्रकार के पौधों व प्राणियों में मुलर की खोज का सत्यापन किया गया। अध्ययन के बाद पाया गया कि सभी प्रकार के अधिक ऊर्जा वाले विकिरण, यदि वे गुणसूत्रों व जीनों तक पहुंचते हैं तो, अवश्य विशेष परिवर्तन या उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) पैदा करते हैं।

मुलर ने पहले-पहल एक्स-रे विकिरण द्वारा कायापलट या 'जीन-परिवर्तन' की तरकीब खोज निकाली। तब से ड्रोसोफिला, पौधों व अन्य जीवों पर अन्धाधुन्ध प्रयोग और अनुसन्धान हो रहे हैं। इन्हीं विकिरण और मक्खियों के मनचाहे कायापलट-सम्बन्धी प्रयोगों के लिए मार्गन ने १९३३ में और मुलर ने १९४६ में नोबल पुरस्कार प्राप्त किया। विकिरण द्वारा डंडी घुमाकर एक ही प्रकार की ड्रोसोफिला को मुड़े, सीधे या छोटे पंखों वाली, लाल या सफेद आंखों वाली, काले या भूरे शरीर वाली, भिन्न प्रकार के टांगों वाली या जैसा चाहें वैसा बनाया जा सकता है।

विकिरण द्वारा जीव परिवर्तन या जीन परिवर्तन के प्रयोगों के बलबूते पर ही आजकल गेहूं, ज्वार-बाजरे, मक्का, धान आदि के अधिक उपज व बड़े दाने वाले और रोगसह पौधे धड़ाधड़ पैदा किये जा रहे हैं।

सूक्ष्मदर्शी अध्ययनों से ज्ञात होता है कि विकिरण गुणसूत्र-टूटने में सहायक होते हैं। वे गुण सूत्रों में सभी प्रकार के विपथन या असा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकिरण का वातावरण और हमारे शरीर पर बहुत प्रभाव पड़ता है । विकिरण किसी भी प्रकार का हो सकता है, अर्थात नाभिकीय आयुधों अथवा परीक्षणों का, न्यूट्रान, एक्स-रे, गामा किरणों व अन्य रेडियो-सक्रिय उत्पादनों का ?

मान्यताएं उत्पन्न करते हैं। होने वाले परिवर्तनों की संख्या और विकिरण-मात्रा परस्पर प्रत्यक्ष रूप से समानुपाती होती है।

आनुवंशिकविज्ञानी (जेनेटीसिस्ट) इस बात से सहमत हैं कि विकिरण उत्प्रेरित उत्परिवर्तनों की कोई सीमा नहीं है। ऐसी अल्प मात्रा कोई नहीं है जिससे जरा भी उत्परिवर्तन न हो। तात्पर्य यह है कि अल्प से अल्प विकिरण से भी कुछ न कुछ परिवर्तन अवश्य होता है । जनन कोशिकाओं––शुक्राणु व अण्डाणु––में प्रत्येक 'डोज' या खुराक कितनी ही अल्प क्यों न हो, उससे गर्भधारण की अवस्था और जनन के बीच भावी पीढ़ियों के लिए खतरे की सम्भावना रहती है।

वैसे विकिरण और जीन परिवर्तन-सम्बन्धी आंकड़े ड्रोसोफिला, चूहे आदि से प्राप्त हुए हैं परन्तु मानव से सम्बद्ध आंकड़े भी उपलब्ध हैं, यद्यपि वे पूरी तरह से सन्तुष्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं कर पाते हैं। मानव से सम्बद्ध आंकड़ों से ज्ञात होता है कि मृत प्रसव, गर्भपात और जन्मजात असामान्यताएं विकिरण से चिकित्सा न करने वाले चिकित्सकों की अपेक्षा विकिरण-चिकित्सकों के परिवारों में अधिक होती हैं।

मात्रात्मक अनुमान

मात्रात्मक अनुमान करने बैठें तो कुछ अनिश्चितताएं सामने आती हैं, क्योंकि मानव-सम्बन्धी आंकड़े अभी अपर्याप्त हैं और प्रयोगात्मक प्राणियों में परिणाम विभिन्न जातियों में बदलते जाते हैं। उदाहरण के लिए, एक निश्चित विकिरण मात्रा के प्रति चूहे ड्रोसोफिला की अपेक्षा १८ गुना अधिक संवेदनशील होते हैं। चूहा ड्रोसोफिला की अपेक्षा बड़े शरीर और लम्बे जीवन-चक्र वाला होता है, इसीलिए वह अधिक संवेदनशील होता है। अतः इसी आधार पर मानव को चूहे की अपेक्षा और अधिक उत्परिवर्तनशील होना चाहिये।

परमाणु-विकिरण के प्रभाव पर संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट से अनुमान होता है कि ४ प्रतिशत मानव-शिशुओं में अभी या बाद में गम्भीर आनुवंशिक दोष होंगे। यद्यपि यह अज्ञात है कि इसका कितना अंश उत्परिवर्तन दर से सम्बद्ध है, तो भी संयुक्त राष्ट्र संघ की समिति ने अनुमानित किया है कि उत्परिवर्तन दर को दुगना कर देने से यह ४ प्रतिशत

परमाणु विकिरण के प्रभाव पर संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट से अनुमान होता है कि ४ प्रतिशत मानव शिशुओं में अभी या बाद में गम्भीर आनुवंशिक दोष होंगे···ऐसा भयानक है विकिरण ! क्या मानव इससे बच सकता है ?

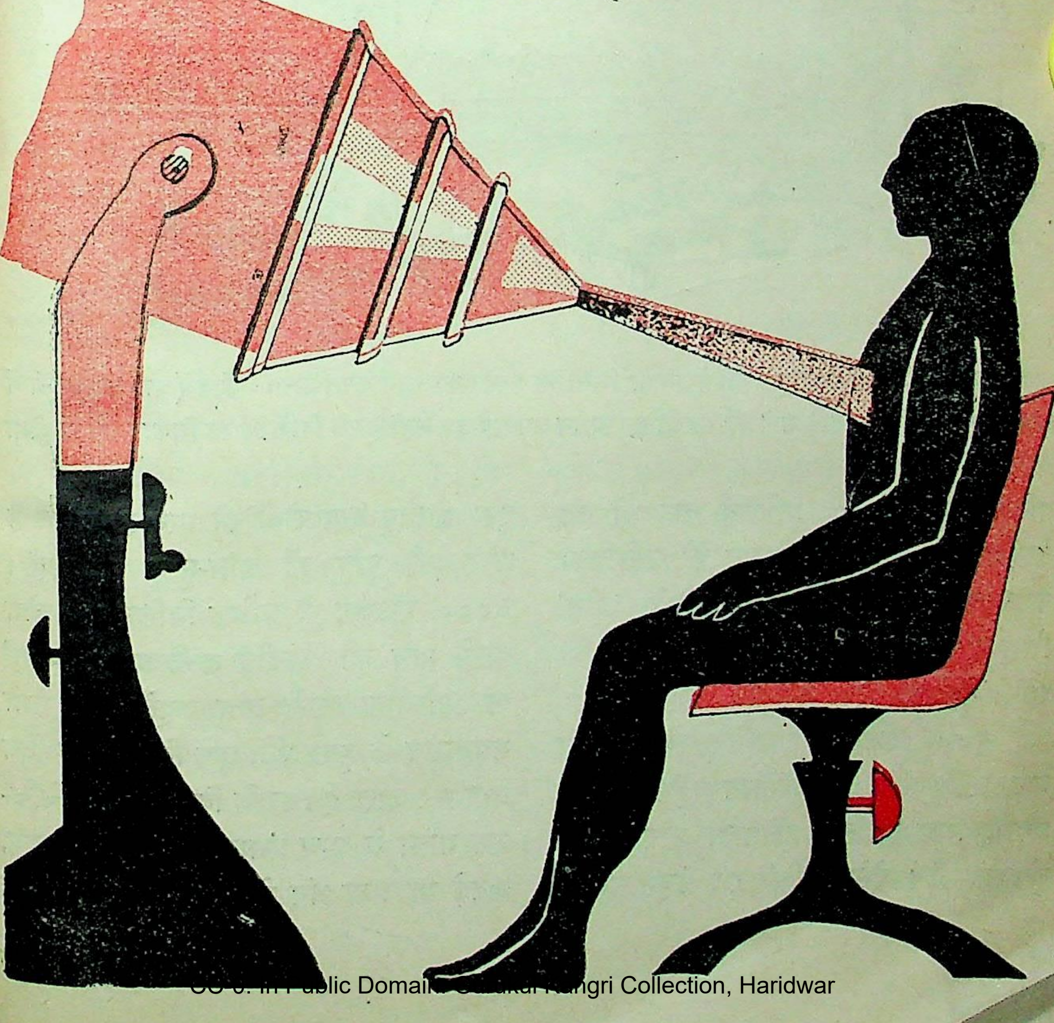

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह एक सच्चाई है कि परमाणु केन्द्रों के निकट किसी भी प्रकार का कार्य करने वाला व्यक्ति (चाहे वह भट्ठी में कोयला क्यों न झोंकता हो) यदि वह सुरक्षा का साधन अपनाये हुए नहीं है तो विकिरण का शिकार अवश्य होगा

परिणामस्वरूप ५–८ प्रतिशत तक भी वढ़ सकता है, क्योंकि विकिरण की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप माता-पिता से दोषी 'जीन' शिशु में पहुंच जाते हैं।

छोटा नुकसान, बड़ा नुकसान

१००० रोंटजन से अधिक विकिरण से जब छोटी आंत को नुकसान पहुंचता है तो वह नुकसान दूर नहीं हो पाता और स्थायी हो जाता है। ऐसे में विकिरण उद्भासन के एक सप्ताह वाद रोगी की मृत्यु हो जाती है और ऐसी मृत्यु को आंत्र-मृत्यु कहते हैं। ३००० रोंटजन से अधिक विकिरण से होने वाली मृत्यु को 'केन्द्रीय तांत्रिका तंत्र मृत्यु' या 'मस्तिष्क वाली मृत्यु कहते' हैं। रोगी उद्भासन के कुछ घंटे, एक दिन या दो दिन वाद मर जाता है। इसके विपरीत कम विकिरण मात्रा से अन्य प्रभाव हो सकते हैं। हाथ, जवड़े या अन्य अंग में दाह (जलन), शरीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में थकान, मतली आना, कै होना, दांत-बालों के झड़ना, अस्थायी बंध्यता तथा सूखी चमड़ी के रोग आदि बातें हो जाना सामान्य लक्षण हैं। ५०-१०० रौंटजन वाला विकिरण रुधिर में अस्थायी प्रभाव उत्पन्न कर सकता है, जैसे रुधिर में लाल व श्वेत रुधिर कणिकाओं की कमी (यद्यपि व्यक्ति को इसका कुछ भी भान नहीं होगा)।

विशेषज्ञों का कथन है कि विकिरण की ऐसी कोई सीमा नहीं है जिससे रोग न हो। आनुवंशिक (पैतृक) हानि के सन्दर्भ में तो कितनी ही कम मात्रा क्यों न हो अवश्य हानि पहुंचेगी।

यह तो थी शरीर में बाहर से आने वाले विकिरण की बात, लेकिन शरीर के अन्दर के पदार्थों से भी विकिरण होने लगता है, जैसे कि 'फॉल-आउट' के रेडियो सक्रिय उत्पादनों—स्ट्रान्शियम, सीजियम, बेरियम, आयोडीन—आदि से। इस प्रकार के विकिरण के कुप्रभाव आइसोटोप विशेष, विकिरण के प्रकार व परास, शरीर द्वारा ली गयी मात्रा, रहने की अवधि, ग्राही अंग आदि पर निर्भर करते हैं।

कुछ विकिरण, जैसे कि अल्फा कण जीवांगों के लिए अधिक हानिकारक होते हैं। प्रभाव के हिसाब से पहले अल्फा कण, फिर न्यूट्रान, बीटा कण और सबसे बाद में एक्स-रे का नम्बर आता है। इन कणों द्वारा अंगों में 'आयन' उत्पन्न और वितरित होते हैं, जो कोशिका या शरीर की इकाई के प्रमुख अणुओं व संरचनाओं को विचलित कर हानि पहुंचाते हैं।

विविध कोशिकाओं में प्रभाव

तेजी से विभाजन करने या विभाजित होने वाली कोशिकाएं विकिरण के प्रति अधिक संवेदनशील होती हैं। इसका इतना प्रभाव होता है कि कोशिकाओं का विभाजन तक रुक जाता है। छोटे कीटों के अंडों पर भी प्रयोग किये गये, यहां यह सुभीता है कि इच्छानुसार कोशिकाद्रव्य (साइटोप्लाज्म) या नाभिक (न्यूक्लियस) को ही विकिरणियित किया जा सकता है। प्रयोगों के आधार पर पाया गया कि नाभिक जिसमें गुणसूत्र व जीन अर्थात् पैतृक गुणों से सम्बद्ध पदार्थ होते हैं, सबसे अधिक संवेदनशील भाग होता है।

विकिरण से कैंसर, त्वक् कैंसर, सबसे पहले देखा गया। जरमन खानों में पिचलैण्ड अयस्क या रेडियम खोदने वालों में आधों की मृत्यु फेफड़ों के कैंसर से हुई। इसी तरह रेडियम घड़ी के पेंटर में अस्थि ट्यूमर देखे गये। प्रयोगों द्वारा यह भी देखा गया है कि एक्स-रे द्वारा या रेडियोऐक्टिव पदार्थ के खिलाने या इंजेक्शन से भी अस्थि कैंसर हो जाता है। मानव में सबसे अधिक सम्भावना ल्यूकेमिया या रक्त कैंसर की रही है। कुछ प्रभाव सुधारे भी जा सकते हैं और कुछ नहीं भी।

आधुनिक अनुसंधान

विकिरण से चिकित्सा करने में यह भी खतरा रहता है कि खराब कोशिकाओं के साथ अच्छी कोशिकाएं भी प्रभावित हो जाती हैं। किन्तु सोवियत वैज्ञानिकों ने हाल में ही रेडियोसक्रिय टाक्सिन या विष खोज लिये हैं, जो प्राणियों में कैंसर कोशिकाओं पर आक्रमण करते हैं और स्वस्थ कोशिकाओं पर कोई प्रभाव नहीं छोड़ते। प्रोफेसर ऐलेक्जेंडर कजिन ने प्रयोगशाला में सूरजमुखी आदि पौधों की पत्तियों पर रेडियोसक्रिय टाक्सिन उगाकर प्रयोग किये। उन्होंने बताया कि चूहों पर ये टाक्सिन सबसे पहले ग्रस्त कोशिकाओं पर प्रभाव डालते हैं। उन्होंने यह चेतावनी भी दी है कि मानव में कैंसर की चिकित्सा में इनका प्रयोग करने से पहले जानवरों में इन प्रयोगों की एक लम्बी श्रृंखला पूरी करनी होगी। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

The First Dispassionate and Impartial Study of the Origin and Development of Muslim Separatist Ideology of Sir Sayyid Ahmad Khan

the aligarh movement

its origin and development

by

M. S. JAIN, M.A., Ph.D.

Reader in History

Tribhuvan University, Kathmandu

Foreword by

A. L. SRIVASTAVA

M.A., Ph.D., D.Litt. (Agra), D.Litt. (Luck.)

Professor Emeritus of History

Agra College, Agra

Indo-Asian Culture

"Dr. Jain has carefully and with thoroughness sifted out the roots of the poison tree, making full use of hitherto unpublished contemporary sources in addition to those published but not generally known."

The Journal of Asian Studies (U.S.A.)

"His book thus makes available to the Indian historian a wide range of opinions by Sir Sayyid and his associates on the variety of issues which faced the Muslim community . . . . He has provided a useful summary of the major areas in which Aligarh activity was concentrated."

Journal of Indian History

" . . . . he has given a comprehensive and objective picture of the Aligarh Movement, probably for the first time, and explained its bearing on Indian politics. He has also brought fresh data in order to remove many misapprehensions or misconceptions on the subject. His book is specially to be valued as a piece of research work showing industry, critical sense and independence of judgment which are very rare qualities in these days."

The Hitavada

"The author has marshalled formidable facts to show that the Aligarh Movement was in fact communal in character right from the very beginning and that Sir Sayyid implanted a feeling of separatism among the Muslims by means of education."

The Pioneer

"His thesis is the product of much industrious research. His narrative is copiously supported by documentation and the reader is fully convinced as to its authenticity. Dr. Jain has not allowed any bias to interfere with his scholarly work. It is not an exposure; it is the story of a regrettable chapter in our history."

The Indian Nation

"The treatment is frank and impartial throughout, and every sincere attempt has been made to make this research work richly authenticated to be safely relied upon. The learned author deserves all commendations for thus drawing the attention of the political and historical doctors of India towards the host of persisting bacteria still seen germinating out of the stinkball of national disintegration."

Price Rupees Twenty

SRI RAM MEHRA & CO., AGRA

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवों में समय-बोध

देवेन मेवाड़ी

समय अब हमारी कलाइयों पर कैद है। हर सुबह उसमें नये दिन का चेहरा तक टंग जाता है। समय की सूइयां हीं अब हमारे दैनिक कार्यों का संचालन करती हैं। ··· लूना–९ ३१ जनवरी १९६६ को एक निश्चित समय पर चन्द्रमा की ओर रवाना हुआ और एक पूर्व निर्धारित समय पर ही सकुशल धरती पर लौट आया। और टर्न पक्षी उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव की ओर ग्यारह हजार मील लंबी यात्रा पर निकला और ठीक समय और दिन के अनुसार अपने गंतव्य स्थान पर पहुंच गया। यही नहीं, वसन्त प्रारम्भ होते न होते एक निश्चित समय पर फिर स्वदेश अपने घोंसले में ही लौट आया। हमारी कलाइयों पर तो समय कैद है, परन्तु टर्न ने समय का ठीक अनुमान कैसे लगाया ? हमारे ठीक समय पर आफिस पहुंचने के पीछे हमारी यांत्रिक घड़ी का हाथ है परन्तु फूलों को ठीक समय पर खिलने-मुंदने का अहसास कैसे हो जाता है ?

क्या सूर्य से ? लेकिन निरन्तर अंधेरे में भी पौधों की पत्तियों में मुंदने की विशिष्ट-गति होती रहती है। शाम ढलते-ढलते कमल के फूल मुंद जाते हैं। चूहे, तिलचट्टे आधी रात को बेहद भाग-दौड़ मचाते हैं। गहन अंधेरे में भी हमारी घड़ियों के पेंडुलम निरन्तर दोलन करते रहते हैं और सोयाबीन की पत्तियों में भी रात और दिन के अन्तर पर ठीक एक नियमित तरह की गति होती रहती है। कीमोग्राफ से खींचे गये लेखा से गति की यह नियमितता स्पष्ट हो जाती है।

जीवों में पेंडुलम

पेंडुलम के दोलनों के ही अनुरूप जीवों में भी एक तरह के दोलन होते रहते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार निश्चित समय पर होने वाली इन विशिष्ट गतियों के कारण जीवों में होने वाले अंतर्जनित स्पन्दन हैं। और जिस तरह नियमित दोलनों के कारण ही हमें अपनी यांत्रिक घड़ी से ठीक-ठीक समय मालूम हो जाता है, जीव भी अपनी अन्दरूनी घड़ी (जैव घड़ी) की सहायता से समय का पता लगा लेते हैं।

अंतर्जनित स्पन्दन समस्त जीवधारियों में होते हैं—वह चाहे वनस्पति हो या प्राणी। स्तनपोषियों में ठीक चौबीस घण्टे के अनुसार स्पन्दन होते हैं और दैनिक स्पन्दन रक्त के ल्यूकोसाइट्स व लालकणों की संख्या पर निर्भर करते हैं।

परन्तु इन अंतर्जनित स्पन्दनों का संचालन कैसे होता है ? सूर्य के उदय-अस्त होने से या तापक्रम के घटने-बढ़ने से नहीं, क्योंकि निरन्तर अंधेरे, प्रकाश या स्थिर तापक्रम में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

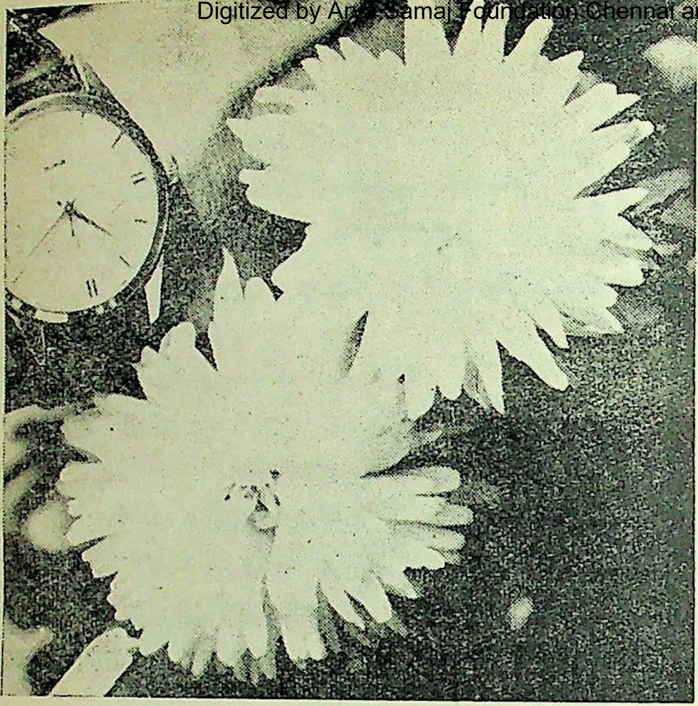

गलदाऊदी को पता है, अब रातें लम्बी होने लगी हैं

मापने के साधन मात्र हैं। जैव घड़ी तो यांत्रिक घड़ी के दोलकों की तरह है, जिसमें किसी भी अच्छी से अच्छी घड़ी के सब गुण मौजूद हैं। उस पर विषम परिस्थितियों, प्रकाश, अंधेरे, तापक्रम या पृथ्वी के घूमने का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। खराब हो जाने पर वह फिर ठीक हो सकती है। जैव घड़ी में दिन और रात की अवधि में ठीक चौबीस घण्टे से कुछ कम या अधिक स्पन्दन होते हैं। परन्तु निरन्तर प्रकाश, अंधेरे या स्थिर तापक्रम पर ठीक चौबीस घण्टे के अनुसार हो होते हैं। जैव घड़ी चाहे मन्द अथवा तेज भी चल रही हो तो दूसरी सुबह स्वयमेव ठीक हो जाती है। अतः किसी जीव के एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रव्रजन करने से उसकी जैव घड़ी उसी स्थान के समयानुसार स्वयं का समंजन कर लेती है। जैसे, न्यूजीलैंड पहुंचने पर डा. सिरोही के दल ने अपनी यांत्रिक घड़ियों की सुइयां वहां के समयानुसार खिसकाकर ठीक कर ली होंगी। तब उन लोगों की जैव घड़ियां न्यूजीलैंड के समय पर चलना प्रारम्भ कर चुकी होंगी। प्रव्रजन करने वाले जीवों में जैव घड़ी दूसरे स्थान पर भी स्वयं समंजित होकर उनकी नियमितता को बनाये रखती है। अतः ईल मछलियों का देशाटन हो चाहे मनुष्य का, दूर-दूर स्थानों में भी प्रवासी जीव की दैनिक क्रियाओं का संचालन जैव घड़ी ही करती है। जैव घड़ी के एक स्थान के विशिष्ट काल को प्रकाश की क्षणिक झलक भी बदल

जीवों को रखने पर भी अंतर्जनित स्पन्दन होते रहते हैं और उनकी नियमित क्रियाओं में अन्तर नहीं पड़ता। पृथ्वी के घूमने से इन क्रियाओं का संचालन होता है, यह ध्रुवों के अतिरिक्त पृथ्वी के किसी अन्य भाग में सिद्ध नहीं हो सकता। इस धारणा को गलत सिद्ध किया भारतीय वैज्ञानिक डा. सिरोही तथा उनके आचार्य प्रो. हैम्मर ने। दक्षिणी ध्रुव में पृथ्वी की उल्टी दिशा में उसी गति से घूमने वाली मेजों पर फल-मक्खियों, सोयाबीन के पौधों व न्यूरोस्पोरा फफूंद की जैव घड़ियों ने ठीक समय का संकेत दे दिया। और पहली बार जीवों में एक स्वसंचालित घड़ी का अस्तित्व सिद्ध हो गया।

सभी जीवों के भीतर एक घड़ी

यह स्वसंचालित भीतरी घड़ी ही एक कोशीय जीव से लेकर मनुष्य तक में समय-बोध कराती है। तमाम नियमित क्रियाओं का संचालन करती है। दैनिक स्पन्दन समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकती है। जैव घड़ी कालगत संकेत उषा काल के 'लाइट्स ग्रान' व सांझ के 'लाइट्स ग्राफ' से प्राप्त करती है।

जैव घड़ी की कार्यप्रणाली के बारे में दो मत हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार यह 'तनाव' और 'शिथिलन' की स्थितियों से शिथिलन दोलक की तरह काम करती है। सोयाबीन की पत्तियों के स्पन्दन निरन्तर अंधेरे में धीरे-धीरे वन्द होने लगते हैं, परन्तु प्रकाश की क्षणिक झलक मात्र से वे फिर प्रारम्भ हो जाते हैं। यह उस कल्पित दोलक का पुनर्चालिन है। कुछों के अनुसार यह युग्मित दोलकों के कारण होता है। एक दोलक के कारण दूसरा प्रारम्भ होता है। उनके अनुसार पत्तियों के स्पन्दन विभिन्न दोलकों की दोलन अवस्थाओं में समकालन के कारण वन्द होते हैं। प्रकाश की झलक से पुनः तुल्यकालन होकर घड़ी कार्य करने लगती है।

जीवों की भीतरी घड़ी प्रकाश-अवधि के प्रति सचेत रहती है

कार्य जैसे भी करती हो जैव घड़ी, परन्तु प्रकाश-अवधि के प्रति यह बहुत सचेत होती है। दिन के एक-एक पल का हिसाब रखती है। भूमध्य रेखीय क्षेत्रों को छोड़कर विश्व के प्रत्येक भाग में एक कोशीय जीव से लेकर स्तनपोषियों तक को वर्ष के प्रत्येक दिन का पता रहता है। कौन जाने, दिनों की इस निरंतर चल रही प्रक्रिया से वर्षों से जी रहा कोई भी पेड़ फ्रेंच दार्शनिक सार्त्र की तरह ही ऊब चुका हो और उसके लिए हर नया दिन सिर्फ दिनों की घिसटन मात्र हो। पेड़ों में अगर बोलने की क्षमता होती तो वे दिन के किसी भी क्षण में हमें 'क्या बजा है' का उत्तर दे देते। जीवों को हमारे कैलेंडर की प्रत्येक तारीख के हर क्षण के समय का पता रहता है। इसी समय-बोध की सहायता से उन्हें अनुकूल तथा प्रतिकूल मौसमों का पूर्वाभास हो जाता है और वे जीवित रहने के लिए स्वयं को उसी के अनुकूल ढाल लेते हैं। गर्मियों के लंबे-लंबे दिनों और जाड़ों की लंबी रातों के अहसास से ही पेड़-पौधे वसन्त में फूलते हैं या गुलदाऊदी की तरह सर्दियों में। किसी एक लंबी अंधेरी जाड़ों की

मार्च की एक सुबह··· लेकिन गेहूं की फसल को दिन और समय का ठीक-ठीक पता है

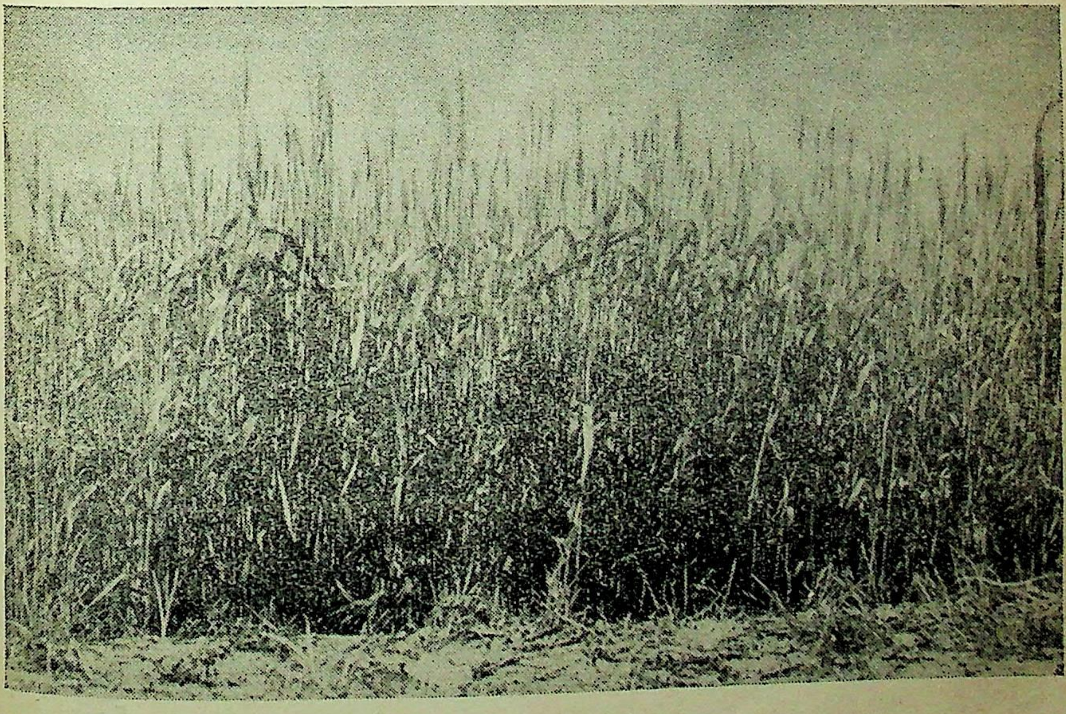

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

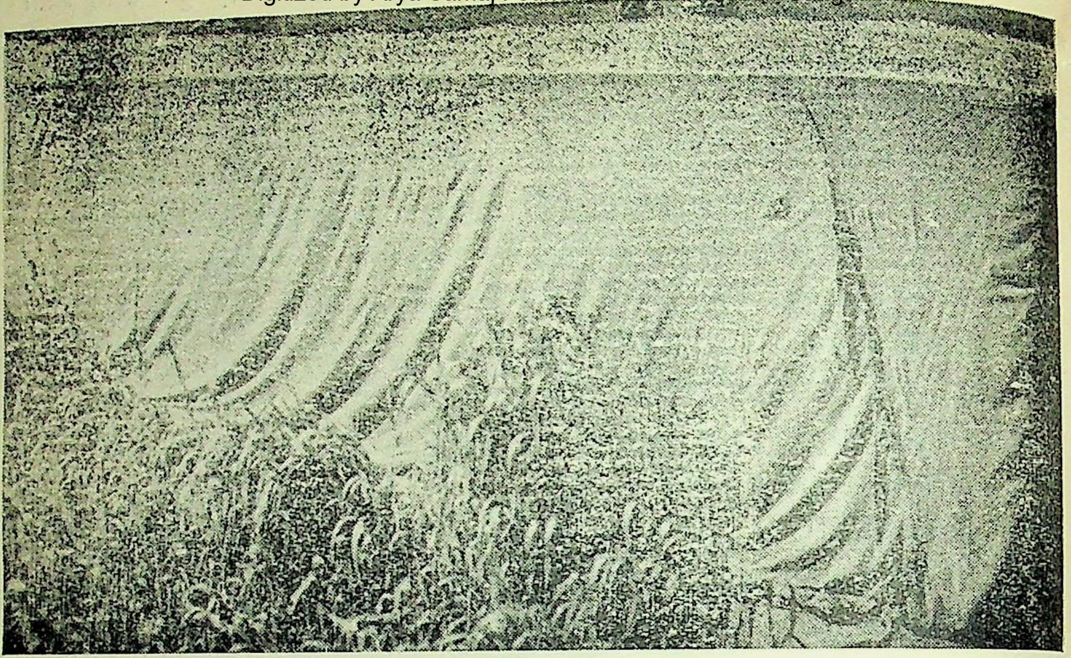

बाहर सर्दियों की एक शाम और भीतर कृत्रिम प्रकाश में समय बदल चुका है

रात को अपनी भीतरी घड़ी की टिक-टिक की आवाज पर बसन्त का इन्तजार कर रही गेहूं की फसल कैमरे के फ्लश की झलक मात्र से भी दिन प्रारम्भ हो जाने के भ्रम से (छोटी रात का अहसास) समय से पूर्व ही फल-फूलकर पक सकती है। बेचारे चूहों को दिन में भी कृत्रिम गहन अंधेरा दिखा कर रात के अहसास में कमरों में दौड़ाया जा सकता।

ड्रोसोफिला (फल-मक्खियां) हर सुबह मैटामारफोसिस के फलस्वरूप प्यूपों के आवरण तोड़कर उन्मुक्त होती हैं। प्यूपों से बाहर वे ठीक सुबह ही निकलती हैं, पहले नहीं। लगातार पन्द्रह पीढ़ियों तक कृत्रिम रूप से निरन्तर प्रकाश देने पर भी उनका समय-बोध समाप्त नहीं हुआ। सुबह की नम हवा में उनके पंख आसानी से खुल जाते हैं। तमाम कीड़ों का जीवन-चक्र अंडे से मक्खी बनने तक एक निश्चित् अवधि में ही पूर्ण होता है। शीतोष्ण कटिबंधीय कीड़ों को तो जैव घड़ी का उपयोग हमारी जेब घड़ी से भी अधिक करना पड़ता है। बदलते हुए परिवेशों में वे स्वयं को ढालते रहते हैं। अनुकूल मौसम में कई पीढ़ियां पैदा-कर प्रतिकूल दिनों में प्राणायाम लगाकर सुषुप्त हो जाते हैं। और समय का इतना सही अनुमान कि प्रयोगों के बीच हर वर्ष ठीक उसी दिन समाधिस्थ होते हैं। मेंढक, केंचुए, घोंघे घड़ी देखकर सर्दियों में अज्ञातवास के लिए चले जाते हैं।

मधुमक्खियां समय की बड़ी पावन्द होती हैं। जैव घड़ी से फूलों के खिलने का समय मांपा और निकल पड़ीं मकरन्द की तलाश में। उधर फूल भी पल-पल का हिसाव लगाकर पंखुड़ियां खोल देते हैं। सूर्य का उगना जरूरी नहीं। मधुमक्खियां तो दिन भर में तीन अलग-अलग दिशाओं में, परन्तु निश्चित् समयों पर उपस्थित हो जाती हैं। उन्हें कृत्रिम प्रकाश में शहद बटोरने सैकड़ों बार दौड़ाया जा सकता है।

परिन्दों को प्रत्येक दिन, दिशा और देश का पता रहता है। वे अपनी भीतरी घड़ी का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपयोग समुद्री जहाज के कप्तान के क्रोनो मीटर की तरह करते हैं और ठीक समय बता सकते हैं। टर्न ३३,००० किमी अमेरिकन गोल्डन प्लोवर उत्तरी से दक्षिणी अमेरिका तक ३६,००० किमी, लंबी प्रवास यात्रायें विना रुके, खाये-पिये टीक-ठीक समय-बोध और दिशा-बोध के कारण कर लेती हैं। सैलानी रोजीपाश्चर ठीक सितम्बर में यूरोप तथा सोवियत रूस से सैर करने बड़ोदा चले आते हैं और ठीक अप्रैल के अंत तक वापस लौट जाते हैं। मधुमक्खियों तथा पक्षियों को सूर्य, चन्द्रमा तथा तारों से दिशा-बोध प्राप्त होता है।

न्यूरोस्पोरा फफूंद में फफूंद-तंतुओं का विकास हर रात के हिसाब से वृत्तों में होता है। हर रात में एक वृत्त। और ओडोगोनियम शैवाल के बीजाणु यांत्रिक घड़ी के समयानुसार ठीक बाइस घंटे बाद उन्मुक्त होते हैं।

पौधों में प्रकाश-संश्लेषण क्रिया द्वारा भोजन बनते रहने से प्रकाश का आधिक्य कम हो जाता है और पत्तियों के बन्द होने से उत्स्वेदन की अधिकता रोकी जाती है।

जैव घड़ी अत्यन्त महत्वपूर्ण है

जैव घड़ी का कृषि और औषध-विज्ञान में

दक्षिणी ध्रुव में सोयाबीन के पौधों में समय खोज रहे हैं डा. गिरिराजसिंह सिरोही

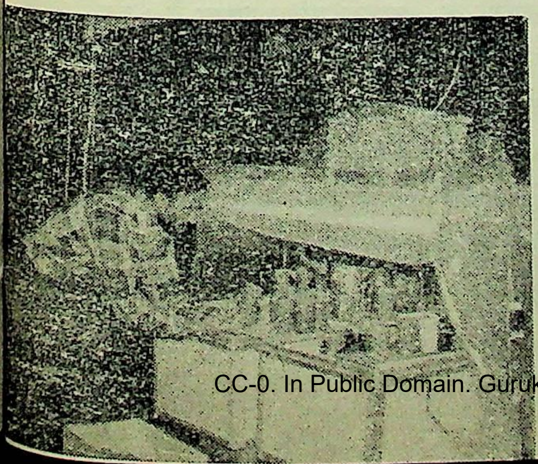

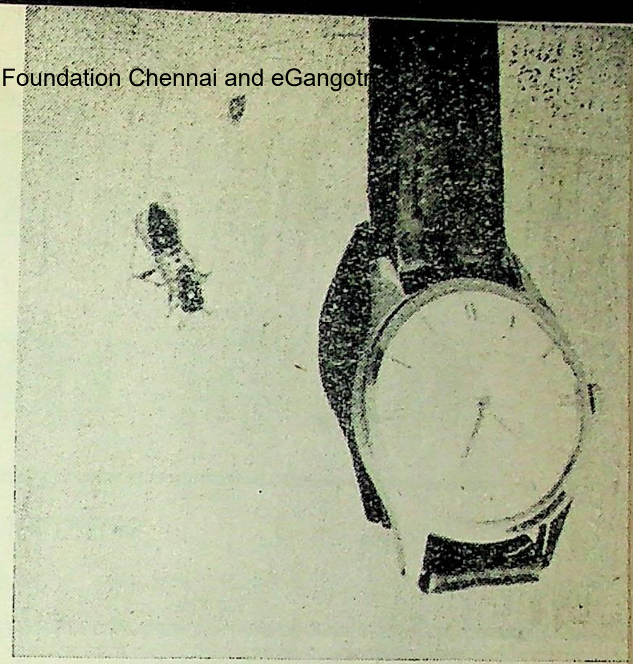

समय की पाबन्द मधुमक्खी...समय देखा और चल पड़ी शहद की तलाश में

अत्यधिक महत्त्व है। फसलें एक निश्चित् समय पर ही फूलती-फलती हैं। प्रकाश व अंधकार की एक निश्चित् अवधि उनके लिए आवश्यक होती है इसी गुण के कारण कुछ पौधे लंबे दिनों के मिलने से तो कुछ छोटे दिनों में पुष्पित होते हैं। कृत्रिम प्रकाश की सहायता से उनकी भीतरी घड़ी का इस तरह समंजन किया जा सकता है कि वे समय से पूर्व ही या देर में पुष्पित हों। गन्ने में जल्दी फूल आ जाने से रस बनना रुक जाता है। अतः उसे देर में पुष्पित किया जा सकता है। तमाम फसलों की साधारणतः आवश्यक प्रकाश व अंधकार की अवधि को कृत्रिम रूप से घटा-बढ़ाकर उन्हें जल्दी पकने के लिए तैयार किया जा सकता है। कांच-घरों में उपयोगी वनस्पतियों को उनकी घड़ी से ठीक समय पर पोषक-घोल देकर उनका उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। भेड़ों को दिन में भी अंधेरे में रखकर उनमें ऊन की मात्रा बढ़ायी जा सकती है। कृत्रिम रूप से बढ़ायी गयी प्रकाश-अवधि में मुर्गियां अधिक अण्डे देती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेय पादपों में काफी तथा चाय

जगदीशचन्द्र

आधुनिक युग में पेय पदार्थ किसी सीमा तक मानव जाति के लिए आहार के रूप में अत्यन्त आवश्यक सिद्ध हुए हैं क्योंकि ये पादपों के द्रव से तैयार किये जाते हैं। प्राचीन काल से मानव इनका उपयोग पेय पदार्थों के रूप में करता चला आया है।

कैफीन वाले अमेघसारीय पदार्थ

संसार में ऐसे पेय पदार्थ जिनमें कैफीन पायी जाती है,अपने गुणों के कारण बहुत अधिक मात्रा में उपयोग में लाये गये हैं। प्रत्येक प्राचीन कृषि केन्द्र में, खाने योग्य अन्य पदार्थों में पेय पादप उगाये जाते थे। इस लेख में काफी तथा चाय का ऐतिहासिक महत्व, प्रकार तथा उपज व तैयार करने की विधि पर विशेष ध्यान दिया गया है।

काफी तथा चाय की उत्पत्ति

काफी की उत्पत्ति दक्षिणी-पश्चिमी एशिया से आरम्भ हुई और अब संसार की लगभग ⅓ जनता इसका उपयोग करने लगी है। चाय का भी सम्बन्ध दक्षिणी-पूर्वी एशिया से है। इसकी खपत संसार की लगभग आधी जनसंख्या में हो रहा है। कोको भी अमरीका का एक पदार्थ है जो फल के रूप में खाने के काम आता है। तथा लोगों के लिए आज भी पेय का काम करता है। इतना ही नहीं, अफ्रीका के लाखों लोगों के लिए यह प्रिय वस्तु बन गयी है। अरब तथा गुआराना निवासी एक विशेष प्रकार का पेय उपयोग करते हैं जिसे 'खट' कहते हैं। यह दक्षिणी अमरीका का भी प्रसिद्ध पेय पदार्थ है। इसमें कैफीन की मात्रा अन्य पदार्थों की अपेक्षा अधिक होती है।

कैफीन वनस्पति का मूल तत्त्व है तथा इससे तैयार की गयी वस्तुओं का विशेष औषधीय महत्त्व है। यही कारण है कि इसका सेवन शिराओं को उत्तेजित करता है तथा मूत्रवर्धन का भी कार्य करता है। अधिक मात्रा में सेवन करने से यह बहुत हानिकारक सिद्ध हुई है। कहावत है कि अति सर्वत्र वर्जयेत। अतः इसकी मात्रा को ध्यान में रखकर सेवन करना चाहिये।

काफी

औद्योगिक दृष्टिकोण से काफी महत्त्वपूर्ण पदार्थ है। संसार में इसकी खपत लगभग ३ अरब पौण्ड है, जिसका मूल्य ५० करोड़ डालर,के लगभग आंका जाता है। इस पौधे को एबीसीनिया की वस्तु मानते हैं, अतः इस प्रदेश में काफी समय से इसका उपयोग होता चला आ रहा है। लगभग ५०० वर्ष पूर्व कुछ लोग इसे अरब ले गये। शनैः–शनैः यह पौधा देश के अन्य भागों में परिचित किया जाने लगा, तत्पश्चात १७०० में लंका तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जावा आदि देशों में भी इसका प्रचार हुआ। वेस्ट इण्डीज में १७२० में तथा ब्राजील में १७७० में यह पौधा उगाया गया। अरब देश से इसका विस्तार मिस्र देश में हुआ। धीरे-धीरे इस पौधे ने अंगरेजी शासन के समान अपना पैर फैलाना आरम्भ किया और १६१५ में वेनिस में, १६४५ में पेरिस में तथा १६५० में लन्दन में भी इसने अपने पैर जमा लिये।

फ्रांस तथा इंग्लैंड जैसे देशों में लोगों ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की और इसे पीकर आनन्द का अनुभव किया। समय के साथ इसकी ख्याति और बढ़ती गयी। यहां तक कि छोटे-छोटे शहरों में भी काफी हाउस बन गये। आजकल तो किसी शुभ अवसर अथवा साहित्यिक या कलात्मक गोष्ठी में बड़े चाव से इसका सेवन करते हैं। १८३३ से पूर्व काफी बनाने का औद्योगिक कारखाना कहीं नहीं था, किन्तु समय के साथ-साथ औद्योगिक प्रगति तीव्रता से होने लगी। यही कारण है कि संयुक्त राज्य अमरीका में अन्य देशों की अपेक्षा काफी की खपत अधिक होती है।

काफी के प्रकार

वनस्पति विज्ञान के अनुसार यह पौधा उस वर्ग का है जिसकी लगभग २५ जातियां भिन्न-भिन्न देशों में पायी जाती हैं परन्तु औद्योगिक दृष्टि से केवल ३ जातियां हमारे लिये अधिक उपयोगी हैं। इस वर्ग को हम वनस्पतिशास्त्र में काफिया (Coffea) कहते हैं।

अरेबियन काफी : इस जाति का पौधा संसार की ९० प्र. श. आवश्यकता की पूर्ति करता है। यह एबीसीनिया का पौधा है जो सुन्दर झाड़ी के समान होता है और जिसकी ऊंचाई लगभग १५ से २० फुट तक होती है। आइए आपको इस पौधे की पहचान करायें। इस पौधे की पत्तियां चिकनी तथा सदा हरी रहने वाली हैं। पुष्प का रंग भी श्वेत होता है। इसके पुष्प भी बहुधा एक गुच्छों में पाये जाते हैं। फल गूदेदार होता है जिसे 'चेरी' कहते हैं। यह अनेक रंगों में परिवर्तित होता रहता है, अर्थात् हरे रंग से पीला, लाल तथा गुलाबी हो जाता है। इस पौधे को गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। लगभग २५ इंच तक की वर्षा इसके लिए पर्याप्त है परन्तु कहीं-कहीं २० इंच से ७५ इंच तथा १२० इंच वर्षा भी लाभदायक है।

कांगो काफी : यह एक बड़ा पौधा है जिसकी पत्तियां छोटी होती हैं। यह मुख्यतयः अफ्रीका स्थित कांगो प्रदेश में पाया जाता है। अरेबियन काफी की अपेक्षा यह कम स्वादिष्ट होता है।

लाइबेरियन काफी : यह पौधा विशेषकर अफ्रीका के पश्चिमी तट पर पाया जाता है। इसकी ऊंचाई ४० से ५० फुट तक होती है, फल का व्यास लगभग एक मिलीमीटर होता है।

काफी की एक डाल में पत्तियां तथा फल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

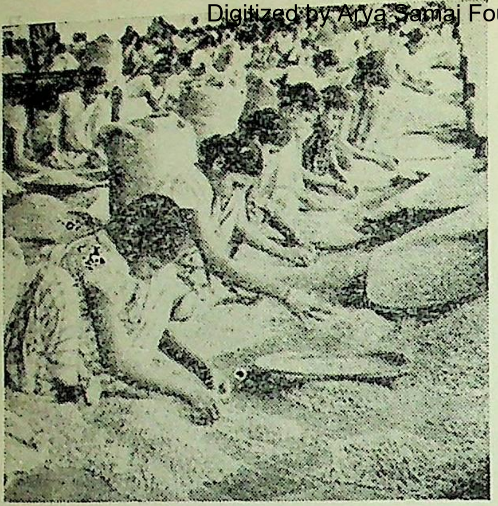

काफी के फलों को पछोरकर बीनती हुई स्त्रियां

उपज तथा तैयार करने की विधि

काफी का पौधा समुद्र तल से लगभग ६ हजार फुट तक की ऊंचाई पर लगाया जा सकता है इसकी उपज के लिए बीजों को तत्क्षण बो दिया जाता है, अथवा छोटे-छोटे पौधे एक स्थान से दूसरे स्थान पर लगभग ६ फुट के अन्तर पर लगा दिये जाते हैं। इसकी वाढ़ के लिए छाया करना तथा निरन्तर घास-फूस हटाते रहना अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार तीसरे वर्ष में पौधा काफी बढ़ जाता है परन्तु पांचवें वर्ष से उपज अच्छी होने लगती है। ३० वर्ष तक इन पौधों के बढ़ने की क्रिया होती रहती है।

काफी का छोटा गोल फल एक-एक करके तोड़ लिया जाता है। इस कार्य को करने के लिए अनेक पहाड़ी स्त्रियां नियुक्त होती हैं, यद्यपि अरब तथा ब्राजील के कुछ भागों में यह सब या तो तोड़ लिये जाते हैं या टूटकर स्वयं गिर जाते हैं। तत्पश्चात् इसका मलवा पृथक करने के लिए उसे पछोर दिया जाता है। लीजिए अब काफी सूखे या गीले रूप में तैयार होकर विक्रय के लिए बाजार में पहुंच गयी। पहली विधि में इसके फलों को प्रकाश में फैला दिया जाता है। साथ ही इस बात का ध्यान रखा जाता है कि ये फल वर्फ के जल से किसी प्रकार भी प्रभावित न हों। सूखते समय इन्हें हाथ से चलाते रहना चाहिये, जिससे समान ताप मिलता रहे। अन्त में सूखे छिलके तथा गूदे मशीन द्वारा पृथक कर लिये जाते हैं, तत्पश्चात् इनका निर्यात किया जाता है।

चाय

कैफीन पेय पदार्थों में यह पेय पदार्थ विशेष प्रचलित है और लगभग संसार की ५० प्रतिशत जनसंख्या में इसका प्रयोग किया जा रहा है। यह सूखी पत्तियों द्वारा तैयार किया जाता है। भारतवर्ष के आसाम प्रदेश में विशेष प्रकार का पौधा उगाया जाता है जिसे वनस्पतिशास्त्र में 'कैमीलिया साइ-नेसिस' कहते हैं। चीन में भी यह पौधा पाया जाता है। सर्वप्रथम लोगों ने इसका उपयोग औषधि के रूप में किया परन्तु पांचवीं शताब्दी में मुख्यरूप से इसे पेय पदार्थ का स्थान मिला। चाय को अंगरेजी में 'टी' कहते हैं। यह शब्द चीन के 'टे' शब्द से बना है। भारत वर्ष में अधिकतर बोलचाल की भाषा में 'चा' शब्द का प्रयोग किया जाता है। चाय का

काफी के फलों को धूप में फलाकर चलाया जा रहा है

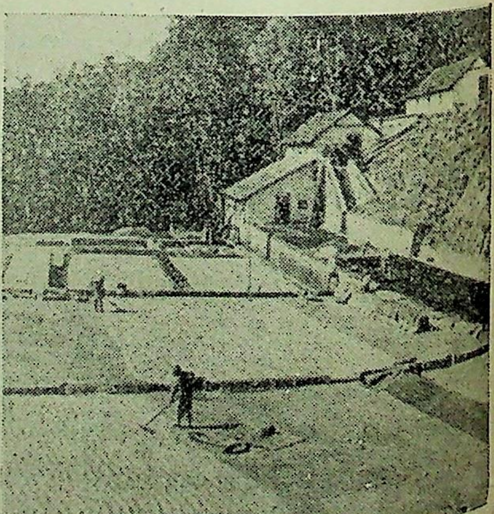

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिचय जापानियों ने लगभग १७०० ईसवी में प्राप्त किया। आज के युग में ग्रेट-ब्रिटेन चाय की खपत का मुख्य केन्द्र बन गया है, तथा लंदन संसार के चाय बाजार का मुख्य स्थल है।

चाय की उपज

चाय का पौधा छोटा, झाड़ी के आकार का होता है। इसकी ऊंचाई ३-४ फुट तक होती है। श्वेत तथा गुलाबी रंग के पुष्प पत्तियों के कक्ष से निकलते हैं तथा इनके समीप कैप्सूल के आकार के फल भी लगते हैं। इन झाड़ियों की समय-समय पर छंटाई करने से इनकी बाढ़ में वृद्धि होती है और काटने के कुछ समय पश्चात् नये अंकुर निकल आते हैं। चाय विशेषकर ऊष्ण भागों में उगायी जाती है। इसके उगाने के साधन भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न होते हैं। इसके लगभग १००० प्रकार होते हैं। चाय का पौधा बीज से उगाया जाता है अथवा पौध लगाकर। इसकी उपज शक्ति २००० से १००० पौंड प्रति एकड़ होती है। लगभग ५० वर्ष या इससे भी अधिक वर्ष तक इसकी उपज स्थाई रहती है। अध्ययन करने से ज्ञात हुआ है कि जापान में कुछ ऐसे पौधे थे जिन्होंने दो शताब्दी तक जीवित रहकर रिकार्ड स्थापित किया। चाय की उपज समुद्र तल से लगभग ५,००० फुट की ऊंचाई तक होती है।

चीन में चाय छोटे-छोटे खेतों में बोई जाती है जबकि लंका में चाय के बड़े-बड़े खेत विद्यमान हैं। चाय की पत्तियों को हाथ से अथवा कैंची के द्वारा पेड़ों से उतार लिया जाता है। यह कार्य विशेषकर कार्यकुशल महिलाएं ही करती हैं। एक बार में एक महिला २५ से ७५ पौंड तक चाय उतार लेती है।

चाय तैयार करने की विधि

चाय की पत्तियां सर्व प्रथम धूप में अथवा छिछली किश्तियों में गर्म करके सुखा ली जाती हैं, तत्पश्चात् हाथ या मशीन के द्वारा रोल कर लिया जाता है जिससे पत्तियां गोल हो जाती हैं। यह मुड़ी हुई पत्तियां फिर धूप में भली-भांति सुखा ली जाती हैं। किन्हीं किन्हीं स्थानों में सुखाने के लिए कुछ यंत्र होते हैं, जिनके द्वारा पत्तियों के ऊपर से गर्म वायु प्रवाहित करते हैं। लीजिए हरी चाय तैयार हो गयी। बाजार में काली चाय भी बहुतायत से मिलती है। काली चाय बनाने के लिए पत्तियों को रोल करने के बाद फर्मेण्ट (खमीर उठाना) कर लिया जाता है, तत्पश्चात् पत्तियों को ढंक देते हैं ताकि वे गरम बनी रहें। ऐसा करने से पत्तियों का रंग और स्वाद बिल्कुल बदल जाता है। ●

प्रभावकारी मरहम

अमरीकी डाक्टरों की एक टोली की धारणा है कि जलने से होने वाले गहरे घावों के संक्रमण को रोकने और उन्हें जल्दी ठीक करने में एक नया संश्लेषित मरहम बहुत ही प्रभावकारी सिद्ध हुआ है। इस मरहम का नाम सल्फाडायाजीन है।

चश्मा जो अंधेरे में देख सकता है

हैम्पशायर, ब्रिटेन में हाल में हुई एक प्रदर्शनी में एक ऐसे चश्मे का प्रदर्शन किया गया जिसके लेंस परावर्णक्रमीय हैं और इसके द्वारा अंधेरे में भी देखा जा सकता है।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

टिन आक्साइड प्रतिरोधक

टिन ग्राक्साइड के प्रतिरोधकों का फ़िल्में तैयार करने में उपयोग बहुत ही प्रचलित हो गया है। धातु फिल्मों के प्रतिरोधकों की अपेक्षा ये सस्ते भी अधिक होते हैं और इनकी क्रियाशीलता भी लगभग उतनी ही होती है, जितनी कि एक धातु के प्रतिरोधक में होती है। इस प्रकार के प्रतिरोधकों की मांग इतनी है कि केवल प्रतिरक्षा कार्यों के लिए भारत को प्रति वर्ष ४० लाख प्रतिरोधक चाहिये। केन्द्रीय विद्युत रसायन अनुसंधान संस्थान, कराईकुड़ी में इसी प्रकार के प्रतिरोधकों के निर्माण की एक मानक विधि तैयार की गयी है।

बी. ओ. एन. अम्ल

रंगाई पदार्थों की निर्माण प्रक्रिया में बी. ओ. एन. अम्ल एक महत्त्वपूर्ण मध्यवर्ती रसायन के रूप में कार्य करता है, साथ ही औषधियों के निर्माण में भी इससे सहायता मिलती है। प्रचलित विधियों में कुछ ऐसी कठिनाइयां आती हैं जिनके कारण निर्माण-प्रक्रिया अनर्गल रूप से लम्बी हो जाती है। पूना की राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला में इसके लिए एक सर्वथा नवीन विधि विकसित की गयी है। मुख्यत: निर्जलीकरण और कार्बनीकरण अवस्थाओं में पर्याप्तसुधार किया गया है। ८० टन प्रति वर्ष उत्पादन क्षमता के एक प्रायोगिक संयन्त्र की स्थापना की जा चुकी है और उसका परीक्षण सफल रहा है।

पत्थर कोयले का नया संयन्त्र

धनबाद स्थित केन्द्रीय ईंधन अनुसन्धान संस्थान ने भारत में उपलब्ध कोकविहीन कोयले से पत्थर के कोयले के उत्पादन के लिए एक सर्वथा नवीन विधि निकाली है और इसके अनुरूप ही एक प्रायोगिक संयन्त्र भी विकसित किया है जिसका परीक्षण सफल रहा है। इस्पात के निर्माण में हमें इस कोयले की बहुत आवश्यकता है। पेट्रोलियम और पेट्रोलियम पदार्थों का उत्पादन भी इसी पर निर्भर करता है। कोयले के हाइड्रोजनीकरण की भारी मांग को देखते हुए संस्थान ने एक १०० गैलन प्रति दिन उत्पादन क्षमता का संयन्त्र इसके लिए विकसित किया है। संश्लेषी गैस के उत्पादन की ओर भी नये प्रयास जारी हैं।

चीनी का उत्पादन बढ़ सकता है

राष्ट्रीय शर्करा संस्थान, कानपुर के शर्करा रसायन विभागाध्यक्ष डा. मुखर्जी ने गन्ने से चीनी निकालने के लिए एक नवीनतम विधि प्रस्तुत की है जिसके द्वारा ४.५ लाख टन चीनी और अधिक प्राप्त की जा सकती है। कई वर्षों के परिश्रम से विकसित यह प्रविधि नि:खनिजीकरण और आयन विनिमय की क्रियाओं पर आधारित है। आजकल जो सल्फाइटीकरण तथा सम्मिश्रण की पद्धतियां हमारी चीनी मिलें इस्तेमाल कर रही हैं उनमें डा. मुखर्जी के अनुसार केवल ८५ प्रतिशत शर्करा अंश ही चीनी में परिणित हो पाता है और शेष १५ प्रतिशत व्यर्थ चला जाता है। इस प्रविधि में संयन्त्र के लिए बहुत बड़ी पूंजी नहीं चाहिये, और सरलता से इसे अपनाया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुग्ध निर्माण और स्राव

डा. महेश्वरसिंह सूद, एम.एस-सी., पी-एच.डी.

प्रत्येक व्यक्ति दूध अथवा दूध से बनी अनेक वस्तुओं का प्रयोग करता है और वह भी यह मानकर कि दूध अथवा दूध से बनी वस्तुएं अन्यतम रूप में पौष्टिक होती हैं। माता के दूध को पौष्टिक एवम् पूर्ण आहार के रूप में भलीभांति जानते हैं। बच्चों के लालन-पालन में दूध ही सर्वप्रथम आहार होता है जिसे माताएं अपने बच्चों को देती हैं। जन्तुओं में स्तनी ही ऐसे जन्तु होते हैं जो स्तनधारी होते हैं। इसी कारण वैज्ञानिक इनको स्तनी, स्तनधारी अथवा स्तनपायी कहते हैं।

दूध : एक सम्पूर्ण खाद्य

दूध सम्पूर्ण खाद्य होता है। इसके अन्दर वे सब तत्त्व होते हैं जिनकी आवश्यकता स्वस्थ शरीर बनाने के लिए होती है। स्त्री, गाय और बकरी के दूध बहुत समान होते हैं, उनमें कुछ अंशों में ही अन्तर होता है। दूध का अधिकांश भाग पानी होता है और इसमें कुछ घुले हुए अथवा निलंबित अंश होते हैं जिनके कारण ही दूध की समस्त विशेषताएं होती हैं। दूध के मुख्य घटक पानी, वसा पदार्थ, प्रोटीन, चीनी, खनिज पदार्थ, विटामिन्स, एन्जाइम्स और कुछ शरीर कोशिकीय पदार्थ होते हैं। यह सब दूध के रचक रक्त से ही बने हुए अथवा निकले हुए होते हैं। इनके बनाने का कार्य स्तन ग्रंथियों के ऊतकों से सम्पन्न होता है। विभिन्न घटकों के कार्य भी भिन्न-भिन्न होते हैं। जल समस्त आहारों का वाहक होता है। कुछ आहार पानी में घुले हुए रहते हैं, और कुछ दोलावृत्ति युक्त होते हैं। इन्हीं दोलावृत्ति वाले कणों के कारण दूध का रंग श्वेत होता है तथा वह अपारदर्शक दिखायी देता है। दूध में पानी सीधा रक्त से छनकर ही आ जाता है। दूध में विभिन्न प्रकार के प्रोटीन भी होते हैं। इनमें मुख्य हैं केसीन, लेक्टोग्लोब्युलिन, रक्त सीरम अल्ब्यूमिन, लेक्टो अल्ब्यूमिन, असंक्राम्य ग्लोब्युलिन्स तथा क्षम्य ग्लोब्युलिन्स हैं। केसीन नामक प्रोटीन केवल दूध में ही होता है। यह स्तन ग्रंथियों की कोशिकाओं द्वारा अमीनो अम्ल का परिणित रूप होता है। इसी के कारण दूध से पनीर बनता है। असंक्राम्य ग्लोब्युलिन्स भी विशिष्ट महत्त्व के होते हैं, इनमें प्रतिरक्षित पिण्ड होते हैं। इनकी सबसे अधिक मात्रा प्रसव के बाद ही दूध में होते हैं, क्योंकि इसी समय नवजात शिशु को अनेक रोगों से सुरक्षा प्रदान करने हेतु इसकी उपयोगिता अधिक रहती है।

दूध के ठोस लिपाइड, वसा, फास्फोलिपाइड, कोलेस्ट्रोल, रंज्य कण तथा वसा-घुलनशील विटामिन्स होते हैं। कोलेस्ट्रोल वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

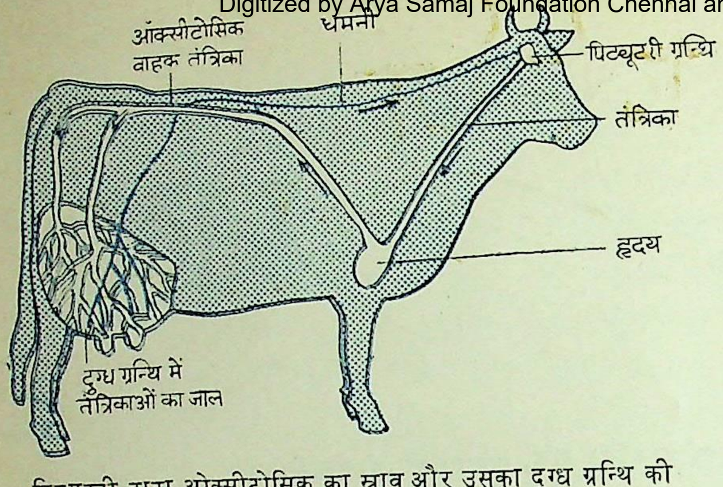

पिट्यूटरी द्वारा ओक्सीटोसिक का स्राव और उसका दुग्ध ग्रन्थि की मांसपेशियों पर प्रभाव

पदार्थ होता है कि जो पराबैंगनी रश्मियों से विटामिन 'डी' का निर्माण करता है। दूध की वसा में घुलने वाला विटामिन 'ए' एक अच्छा पौष्टिक तत्त्व है। दूध में जो पीले रंग की झलक होती है वह विटामिन 'ए' की पूर्व स्थिति के कारण होती है जिसे केरोटीन कहते हैं। जो गाय पीले रंग का दूध देती हैं, उसमें इस पीले रसायन अर्थात केरोटीन को विटामिन 'ए' में बदलने की शक्ति नहीं होती है। वह नस्लें जो सफेद दूध देती हैं, उनमें इस प्रकार केरोटीन को विटामिन 'ए' में बदलने की पूर्ण क्षमता होती है। ताजे दूध में विटामिन 'ई' भी पर्याप्त मात्रा में होता है। दूध में वसा की मात्रा छोटे-छोटे कणों (ग्लोब्यूल्स) में बंटी होती है। यह कण एक-दूसरे से पतली झिल्ली से पृथक रहते हैं और इस प्रकार इम्लशन बनाते हैं। दूध के अन्दर जो और अन्य अंश होते हैं उन सबको केवल दूध का ठोस कह दिया जाता है। इस ठोस में चीनी, प्रोटीन, धातु तथा अन्य वसारहित घटक होते हैं।

दूध की चीनी दूध में ही

दूध की चीनी लेक्टोज होती है। यह भी केवल दूध में ही पायी जाती है। यह गैलेक्टोज और ग्लूकोज दो प्रकार की चीनियों से मिलकर बनी होती है, जो रक्तीय ग्लूकोज से संशिलिष्ट प्रक्रिया द्वारा बनती हैं। दूध के मुख्य धातु कैलशियम और फोस्फोरस होते हैं। दूध के अन्दर 'ए', 'डी' और 'ई' विटामिन के अतिरिक्त 'बी' और 'सी' विटामिन भी होते हैं। ये चौपायों में बैक्टीरिया द्वारा आमाशय में संशीलष्ट होते हैं।

दूध में कुछ एन्जाइम्स और शरीर कोशिकाओं के भाग भी होते हैं। वसा और कार्बोज शक्ति देने वाले होते हैं। वसा विटामिन्स को घोलने का कार्य भी करती है। प्रोटीन अकंकालीय ऊतकों का निर्माण करते हैं।

धातु लवण जैसे कैलशियम और फास्फोरस कंकालीय ऊतकों का निर्माण करते हैं। यह सब कुछ होते हुए भी दूध में शरीर के निर्माण हेतु नितान्त आवश्यक रसायन लौह तथा कुछ विटामिन्स का अभाव रहता है, जिसकी पूर्ति खाद्य को सम्पूर्ण बनाते हेतु अन्य प्रकार से करनी होती है। दूध न केवल बच्चों के लिए अपितु सभी आयु के मानवों के लिए अति उत्तम पौष्टिक पेय है। जहां बालकों को कम मात्रा की आवश्यकता होती है वहां व्यस्कों को अधिक मात्रा की, जिस कारण व्यस्क केवल दुग्धाहारी न होकर अन्य खाद्य खाने पर विवश होते हैं।

स्त्री (मानव), गाय और बकरी के दूध की यदि तुलना की जाये तो प्रतीत होगा कि ये तीनों दूध समान घटक वाले होते हैं। केवल उनकी मात्रा में अन्तर रहता है जैसा कि निम्नलिखित तालिका से पता चल सकेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घटक	स्त्री (मानव)	गाय	बकरी
	%	%	%
पानी	८८·२	८६·८	८७·९
समस्त ठोस	११·८	१३·२	१२·१
वसा	३·७	३·७	३·९
प्रोटीन	१·३	३·२	३·२
चीनी	६·८	४·६	४·५
राख	०·२	०·७	०·७

थोड़ी चीनी तथा पानी मिला देने से गाय व बकरी का दूध मानव के दूध के सामान ही हो जाता है। दूध के प्रायः समस्त घटक गाय अथवा स्त्री के रक्त से ही निर्मित होते हैं। कुछ घटक रक्त व दूध में समान रूप में रहते हैं, अन्य स्तन ग्रंथियों में स्थित ऊतकों द्वारा परिवर्तित होकर नवीन रूप लिये हुए होते हैं।

दूध दुग्ध उत्पादक ऊतकों द्वारा ही निर्मित हो सकता है

दूध केवल दुग्ध उत्पादीय ऊतकों द्वारा ही निर्मित हो सकता है। ये ऊतक अपरिपक्व मादाओं में अर्धविकसित (अपूर्ण विकसित) रूप में रहते हैं जो गर्भ स्थापित होने पर एक विशेष प्रकार की उत्तेजना प्राप्त कर सक्रिय हो उठते हैं और इससे स्तन-ग्रंथियां विकसित हो जाती हैं। प्रसव होने तक वे पूर्ण वर्धित हो जाती है जिससे प्रसव होने तक दूध बाहर आने लगता है। दुग्ध ग्रंथियां वाह्य स्रावक ग्रंथियां होती हैं अर्थात् इनका स्राव बाहर त्वचा की सतह पर आता है।

दुग्ध ग्रन्थि रचना

दुग्ध ग्रंथियां चाहे वह किसी भी स्तनी चूहा, मानव, गाय या बन्दर की क्यों न हों समान रचनायुक्त होती हैं। यह सब (चित्र—सम्मुख पृष्ठ) कूपिका कोशों (एल्बुलाई) के बने होते हैं जो वास्तविक स्राविक अंग होते हैं। प्रत्येक कूपक कोश विशिष्ट गोल कोशिकाओं के बने होते हैं जो मध्य रिक्त स्थान के चारों ओर अंगूर के गुच्छे की तरह लगे होते हैं। इनसे संलग्न एक वाहिका रहती है। जो दूध को चूचक तक पहुंचाती है। दूध का स्राव हारमोन के कारण होता है। इसके स्राव में तंत्रिका तंत्र का कोई सम्बन्ध नहीं होता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि दूध के स्राव का कारण अन्तःस्रावी ग्रंथियों जैसे डिम्ब ग्रंथि और पिट्यूटरी ग्रंथि के स्राव होते हैं। डिम्ब ग्रंथि के प्रमुख हारमोन ओस्ट्रोजन और प्रोजेस्ट्रोन होते हैं। ये दोनों स्राव दूध के स्राव को तो प्रोत्साहित करते ही हैं, इसके साथ ये स्राव गर्भाशय में भ्रूण को स्थापित करते हैं तथा निरन्तर भ्रूण को विकसित करते रहने के लिए भी जिम्मेदार होते हैं। जहां तक दुग्ध ग्रंथियों का सम्बन्ध है, ये दुग्ध वाहिनियों को वर्धित करती है तथा प्रोजेस्ट्रोन के साथ मिलकर कूपिका कोशों को विकसित करती हैं।

किन्हीं-किन्हीं जातियों जैसे गिनीपिग में केवल ओस्ट्रोजन से ही दोनों भाग विकसित हो जाते हैं। पहले यह विचार था कि इन हारमोनों से सीधा प्रभाव होने पर दुग्ध ग्रंथि वर्धित हो जाती है पर अब वैज्ञानिकों ने यह निश्चित किया है कि पिट्यूटरी अन्तःस्रावी ग्रंथि (जो मस्तिष्क के आधार में स्थित होती

दुग्ध ग्रन्थि-सम्बन्धी धमनियां

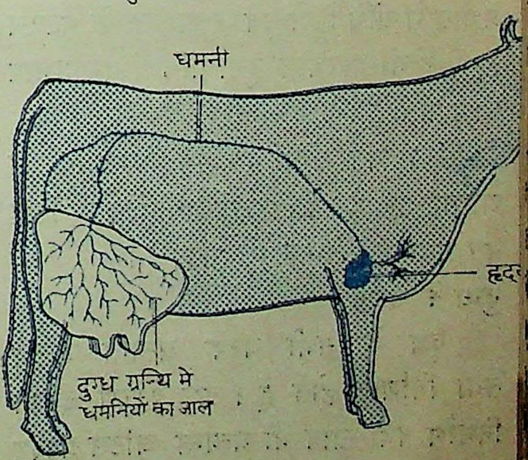

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

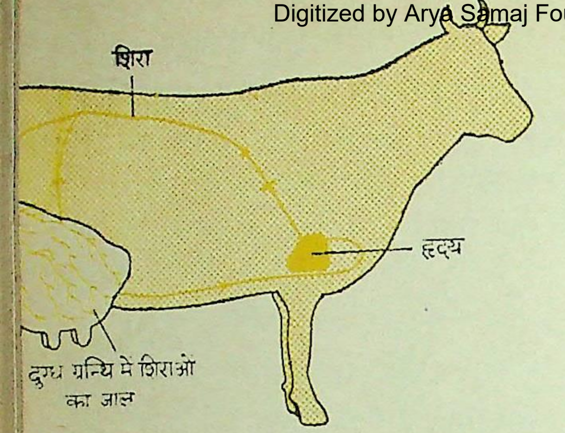

दुग्ध ग्रन्थि-सम्बन्धी शिराएं

है और जिसके दो दल होते हैं एक 'अग्र' और दूसरा 'पश्च') के दोनों ही दल दुग्ध स्राव से सम्बन्ध रखते हैं। अग्रदल दुग्ध वृद्धि, जिसे वैज्ञानिक लेक्टोजेनिक (दुग्ध वृद्धि) क्रिया कहते हैं, तथा दुग्ध ग्रंथि तक वृद्धि प्रक्रिया (मेमोजेनिक क्रिया) कराता है। पश्च दल दूध को बाहर निकालने की क्रिया (निष्कासित क्रिया या ओक्सीटोसिक क्रिया) कराता है। वैज्ञानिकों का दूसरा मत यह है कि पिटट्यूटरी से दो हारमोन स्राव करता है जिन्हें मेमोजीन्स नं. १ और २ कहते हैं, ये दोनों समस्त विनांस के लिए पूर्ण उत्तरदायी होते हैं। इस मत को 'मेमोजेनिक मत' कहा जाता है। तीसरा मत यह है कि पिटट्यूटरी के प्रभाव से ग्रंथियों में पूर्व सुग्राहिता के कारण ही ये दोनों हारमोन दुग्ध ग्रंथियों पर प्रभाव डाल पाती हैं।

उपरोक्त तीनों ही मत केवल तर्क के आधार पर हैं क्योंकि इन्हें प्रयोगों द्वारा सिद्ध करना सम्भव ही नहीं हो सका है।

दुग्ध के घटक

दूध के सभी घटक अत्यन्त जटिल तथा विशिष्ट होते हैं। इस कारण इनका निर्माण तथा स्राव भी अत्यन्त जटिल प्रकार से हो पाता है। दूध में पाये जाने वाले प्रोटीन केसीन, शकरा, लेक्टोज और वसा–मक्खन केवल दूध में ही पाये जाते हैं। अन्यत्र ये कहीं भी नहीं पाये जाते हैं। ये दुग्ध ग्रंथियों की कोशिकाओं द्वारा विशेष प्रकार के हारमोन से उत्तेजना लेकर ही बनते हैं। हारमोन के प्रभाव से दूध की मात्रा भी नियंत्रित होती है। यह विशेष हारमोन लेक्टोजेनिक हारमोन ही होता है जो दूध के स्राव और मात्रा दोनों के लिए उत्तरदायी रहता है। दूध कोई ऐसा पदार्थ नहीं है जो केवल रक्त से छनकर या किसी अन्य रसायन से मिश्रित होकर आ जाता है। यह तो एक प्रकार की मशीन की बनी वस्तु सदृश्य पदार्थ माना जा सकता है। विभिन्न रसायन, हारमोन आदि स्तन ग्रंथियों में एकत्र होते हैं और यहां इन ग्रंथियों की विशेषता से दूध बनता है। वैज्ञानिकों ने यह अनुमान लगाया है कि एक घनफल दूध लगभग चार सौ घनफल रक्त से निकलता है। दुग्ध शर्करा लेक्टोज रक्त के ग्लूकोज और कुछ अन्य पदार्थों से बनता है। दुग्ध वसा भी इसी प्रकार से रक्त के उदासीन वसा से बनता है। आदर्श दुग्ध कैसीन, लेक्टोअल्ब्युमिन और लेक्टोग्लोब्युलिन रक्त

दुग्ध ग्रन्थि की आन्तरिक रचना

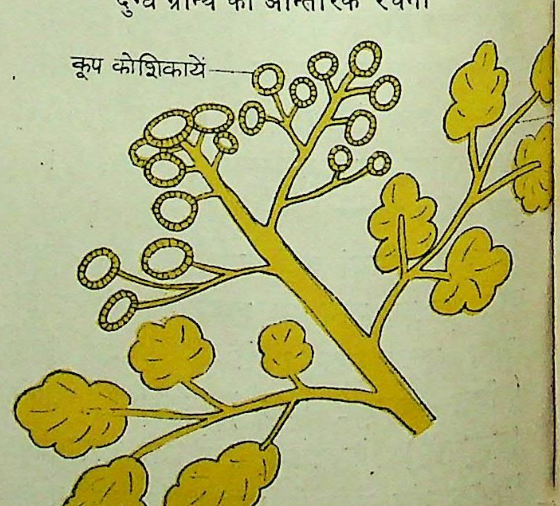

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सीरम से वनते हैं। इन सब में स्तन स्थित ग्रंथियां ही 'अग्रेसर' का कार्य करती हैं तथा इनके कारण ही इन सब घटकों का निर्माण सम्भव हो पाता है। इन सबके निर्माण में कूप कोशिकाएं ही जीव रासायनिक इकाई का कार्य करती हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि कूप कोश समुच्चय निविश की तरह कार्य सम्पन्न करते हैं। सभी जन्तुओं में इनकी आकृति व कार्य एक होते हुए भी विभिन्न जाति के जन्तुओं के दूध के घटकों के परिमाण में पर्याप्त अन्तर रहता है। यह जाति विशेष, आकार अन्तर तथा जीवन विधि के कारण होता है। इस तथ्य का स्पष्टीकरण निम्न तालिका से किया जा सकता है :

जाति	वसा%	शर्करा%	प्रोटीन%
गाय	४·०	५·०	३·५
घोड़ी	१·२	६·०	२·०
खरगोश	१५·५	२·०	१०·५
ह्वेल	४४·०	१·०	१०·०
स्त्री	३·५	६·५	१·८

वैज्ञानिकों ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि दूध के विभिन्न घटकों के परिमाण में तथा शिशु के शरीर की वृद्धि में एक व्युत्क्रांत सम्वन्ध रहता है। जवकि मानव का शिशु अपने जन्म के वजन को दुगुना करने में १८० दिन लगाता है, वहां खरगोश का वच्चा केवल ६ दिन और वकरी का वच्चा २२ दिन। ऐसा केवल विभिन्न घटकों के प्रतिशत के कारण ही होता है।

दूध का निष्कासन

दूध के निर्माण और स्राव के पश्चात् यह आवश्यक होता है कि वह समय पर चूचकों में आ सके तथा वाहर निकल सके। यह कार्य ओक्सीटोसिन हारमोन से होता है। जव यह हारमोन रक्त में पहुंचता है तव यह स्तन स्थित मांसपेशियों को सिकोड़ता है जिससे दूध को वाहर निकलने की अनुमति मिलती है।

दूध सम्वन्धी यही एक क्रिया ऐसी है जिसमें तंत्रिका तंत्र का कार्य रहता है अन्यथा समस्त निर्माण तथा स्राव में हारमोन प्रक्रियाएं ही अपना स्थान रखती हैं। यही कारण है कि दूध दूहने के समय गाय के पास किसी प्रकार की आवाज अथवा कोई अन्य व्याकुलता उत्पन्न करने वाली परिस्थिति नहीं होनी चाहिये। ●

सूर्य : एक उपग्रह

एक अमरीकी वैज्ञानिक दल रेडियो तरंगों के फैलाव पर वायुमण्डल के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए एक उपग्रह के रूप में सूर्य का प्रयोग कर रहा है। सूर्य के दैनिक पथ में एक विद्युताणु उपकरण उसका अनुसरण करता है और रेडियो-संकेतों को रिकार्ड करके वर्षा एवं वायुमण्डल-सम्वन्धी जानकारी प्राप्त करता है।

यह परीक्षण होमडेल, न्यूजर्सी स्थित रेडियो रिसर्च प्रयोगशाला के निकट एक पर्वत शिखर पर किया जा रहा है। इस अध्ययन के लिए विशेष रूप से एक 'सन ट्रैकर' नामक अणु विद्युतीय उपकरण का विकास किया गया है।

एक नयी मशीन

रोदमस्टेड स्थित कृषि अनुसन्धान केन्द्र में वैज्ञानिकों ने हरी पत्तियों से खाने योग्य प्रोटीन प्राप्त करने की एक मशीन विकसित की है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A Sincere and Frank Study illuminating a Dark Corner of the Modern History of India

RAJASTHAN
BETWEEN THE
TWO WORLD WARS

by

P. S. CHOUDHRY
M.A., LL.B., Ph.D.
Department of History, University of Rajasthan

In this thoroughly well documented research the author describes with clarity and frankness the political stir and fermentation in Rajasthan—the land of bravery, valour and chivalry—during the period between the first and second World Wars.

Price Rupees Thirty

SRI RAM MEHRA & CO., AGRA

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपेक्षिकता

सामान्य बुद्धि का सन्दर्भ

सूर्यदेव पाण्डेय

इथर के अस्तित्व की समस्या को आपेक्षिकता के सिद्धांत ने सुलझाया। यह समस्या तो सुलझी ही, साथ ही कुछ दूसरी समस्याएं भी सुलझीं। आपेक्षिकता के सिद्धांत ने कुछ अद्भुत सम्भावनाएं भी सामने रखीं जिनकी सत्यता की परीक्षा परमाणु युग के प्रारम्भ में की गयी।

आपेक्षिकता के सिद्धांत के दो भाग हैं--- आपेक्षिकता का विशिष्ट सिद्धांत और आपेक्षिकता का सामान्य सिद्धांत। विशिष्ट सिद्धांत की स्थापना आइंस्टीन ने १९०५ में की और सामान्य सिद्धांत उसने १९१६ में स्थापित किया। विशिष्ट सिद्धांत का सम्बन्ध उन वस्तुओं या मण्डलों से है जो एक निश्चित वेग से एक-दूसरे के सापेक्ष गतिशील हैं या बिलकुल ही अगतिशील हैं। सामान्य सिद्धांत का सम्बन्ध उन वस्तुओं या मण्डलों से है जो एक दूसरे के सापेक्ष अपनी गति तीव्र या मन्द कर रहे हैं।

आइंस्टीन ने इथर के अस्तित्व से संबंधित समस्या तथा प्रयोगों का सतर्कतापूर्वक अध्ययन किया और दो महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले। ये आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धांत की आरम्भिक अभिधारणाएं हैं। वस्तुतः आपेक्षिकता का विशिष्ट सिद्धांत इन पर ही आधारित है।

इथर का अस्तित्व नहीं ज्ञात किया जा सकता

पहली अभिधारणा ने इथर की समस्या का समाधान प्रस्तुत किया। इसने यह स्थापना दी कि इथर का अस्तित्व ज्ञात नहीं किया जा सकता। क्यों नहीं का उत्तर देने से पहले हम एक उदाहरण लेंगे। नदी पर एक पुल है। पुल पर से आप नदी के जल में झांक रहे हैं। आप नदी के जल में अपनी परछाईं देख रहे हैं। आपको लगेगा कि नदी का जल स्थिर है और पुल तथा आपकी परछाईं एक ओर को धीरे-धीरे खिसक रही है। लेकिन यह आप अच्छी तरह जानते हैं कि पुल अगतिशील है और पानी गतिशील हैं।

अब हम एक दूसरा उदाहरण लेंगे। इस उदाहरण में यह ज्ञात कर पाना कठिन होगा कि दो वस्तुओं में कौनसी गतिशील है। आप अपने राकेट में पृथ्वी के सापेक्ष ५,००० किमी प्रति घण्टे की गति से उड़ान भरते हैं। फिर आप अन्तरिक्ष में पहुंच जाते हैं और इसी गति से उड़ते रहते हैं। जब पृथ्वी आपकी आंखों से ओझल हो जाती है तो आप एक दूसरे राकेट को देखते हैं। यह राकेट आपसे पीछे है लेकिन जल्दी ही आप से आगे हो जाता है। निश्चय ही आप यह मान लेंगे कि वह राकेट आपसे अधिक गति में उड़ रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

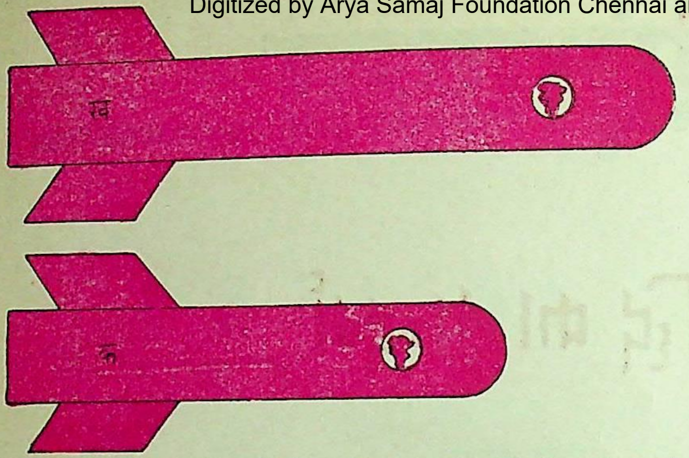

आप अपने क राकेट में पृथ्वी के सापेक्ष ५,००० किमी प्रति घण्टे की गति से उड़ान भरते हैं, फिर आप अन्तरिक्ष में पहुंच जाते हैं और इसी गति से उड़ते रहते हैं। जब पृथ्वी आपकी आंखों से ओझल हो जाती है तो आप एक दूसरे राकेट ख को देखते हैं। यह राकेट आपसे पीछे है लेकिन जल्दी ही आपसे आगे हो जाता है···लेकिन क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि ख राकेट अगतिशील है और आप अपने क राकेट में १,००० किमी प्रति घण्टे की रफ्तार से पीछे की तरफ पृथ्वी की ओर उड़ रहे हैं ?

कौनसा राकेट चल रहा है, कौनसा राकेट खड़ा है ?

लेकिन उस राकेट के अपने से आगे निकलने के बाद आप उसके सवार की यह बात सुनकर दंग रह जाते हैं कि वह सोचता है, आपका राकेट खड़ा है। यह कैसे प्रमाणित आप करेंगे कि आपका राकेट गतिशील है ? निश्चय ही दूसरे राकेट और आपके राकेट की गति में अन्तर है क्योंकि आप उसे अपने पीछे आता हुआ पहले देखते हैं और फिर वह आपसे आगे निकल जाता है। मान लीजिए कि आपके पास रडार है जिसकी सहायता से आप यह ज्ञात कर लेते हैं कि वह आपके सापेक्ष १,००० किमी प्रति घंटे की गति से चल रहा है। लेकिन यह आप केवल मालूम ही कर सकते हैं। और आप शायद यह भी सोच सकते हैं कि जब आपने पृथ्वी छोड़ी थी तो आपके राकेट की गति ५,००० किमी. प्रति घंटा थी और यह दूसरा राकेट आपकी अपेक्षा १,००० किमी प्रति घंटा की गति से आगे है तो शायद यह पृथ्वी के सापेक्ष ६,००० किमी प्रति घंटे की गति से उड़ रहा है। लेकिन यह निष्कर्ष आवश्यक रूप से सही नहीं है। यह भी सम्भव हो सकता है कि पृथ्वी के सापेक्ष आप २,००० किमी प्रति घंटे की गति से उड़ान भर रहे हैं और वह ३,००० किमी प्रति घंटे की गति से उड़ान भर रहा है, और उसकी उड़ान पृथ्वी के सापेक्ष है। और एक आश्चर्यजनक निष्कर्ष यह भी हो सकता है कि वह राकेट अगतिशील है और आप १,००० किमी प्रति घंटे की रफ्तार से पीछे की तरफ पृथ्वी की ओर उड़ रहे हैं।

आप यह महसूस करेंगे कि बिना किसी अगतिशील वस्तु के आप उसके सापेक्ष अपनी गति नहीं ज्ञात कर सकते। आप यह भी नहीं कह सकते कि कौनसा राकेट गतिशील है और कौनसा अगतिशील है। आप केवल इतना ही कह सकते हैं कि दूसरे राकेट के सापेक्ष आप १,००० किमी प्रति घंटे की गति से गतिशील हैं। कितना भी विषद् उपकरण तैयार कर लिया जाय, वह यही बतायेगा कि आप इस या उस वस्तु के सापेक्ष गतिशील हैं। मान लीजिए कि आप अन्तरिक्ष में नक्षत्रों तथा ग्रहों से बिलकुल दूर चले गये हैं। कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है जिसके सापेक्ष आप अपनी गति ज्ञात कर सकें तो आपको यह कह पाना कठिन होगा कि आप गतिशील हैं या अगतिशील।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आइंस्टीन ने इ[illegible] को [illegible] कि सभी गतियां किसी न किसी के सापेक्ष हैं। विशुद्ध या पूर्ण गति सम्भव नहीं है। गति हमेशा किसी के सापेक्ष होगी। साधारण तौर पर यह हम कहते हैं कि इस वस्तु की यह गति है, लेकिन हमें यह कहना चाहिये कि इस वस्तु की गति इसके सापेक्ष इतनी है। हालांकि पृथ्वी पर की वस्तुओं के सम्वन्ध में ऐसा नहीं कहा जाता क्योंकि यह मान लिया जाता है कि पृथ्वी पर की सभी वस्तुओं की गति पृथ्वी के सापेक्ष है। ५० किमी प्रति घण्टे का तात्पर्य है पृथ्वी के सापेक्ष ५० किमी प्रति घण्टा। पृथ्वी को छोड़ देने पर इस गति का कोई अर्थ नहीं रह जाता।

ब्रह्माण्ड के सभी पिण्ड एक-दूसरे के सापेक्ष गतिशील हैं

ब्रह्मांड में कोई भी अगतिशील वस्तु नहीं है जिसे हम वेग मापने के लिए चुन लें। पृथ्वी अपनी धरी पर और सूर्य के चारों ओर घूमती है। सूर्य तथा हमारा सौरमण्डल हमारी नीहारिका में गतिशील है और नीहारिका भी ब्रह्मांड में गतिशील है। सम्पूर्ण ब्रह्मांड में गति व्याप्त है। हमारी नीहारिका दूसरी नीहारिकाओं से सापेक्ष भी गतिशील है। इस तरह के गतिशील ब्रह्मांड में यह कह पाना कठिन है कि क्या चीज गतिशील है और क्या चीज अगतिशील। हां, इतना तो कहा ही जा सकता है कि ब्रह्मांड के सभी पिण्ड एक-दूसरे के सापेक्ष गतिशील है। इनमें से कोई भी किसी विशेष स्थिति में नहीं है और न किसी के किसी विशेष स्थिति में होने की सम्भावना ही है।

लेकिन इन सब बातों से यह निष्कर्ष कैसे निकाल लें कि इथर का अस्तित्व प्रमाणित नहीं किया जा सकता? वह इस तरह कि अगतिशील इथर विशुद्ध या पूर्ण गति में होगा और ब्रह्मांड में यही अकेला अगतिशील होगा। यही कारण है कि इथर का अस्तित्व नहीं जाना जा सकता। जिस तरह एक जलयान के भीतर यह नहीं ज्ञात किया जा सकता कि वह गतिशील है या स्थिर है ठीक उसी तरह इथर में गतिशील पृथ्वी पर रहते हुए पृथ्वी की गतिशीलता नहीं ज्ञात कर सकते।

अपनी पहली अभिधारणा के अंतर्गत आइंस्टीन इथर के अस्तित्व को पूर्णतः अस्वीकार नहीं करता बल्कि वह कहता है कि इथर का अस्तित्व नहीं जाना जा सकता। इस संबंध में यह ज्ञातव्य है कि आपेक्षिकता के विशष्ट सिद्धांत के अंतर्गत इथर के अस्तित्व में होने न होने का महत्त्व नहीं है। इस सिद्धांत के किसी निष्कर्ष का इथर से किसी भी तरह का सम्वन्ध नहीं है। आइंस्टीन ने यह स्वीकार किया है कि इथर सम्वन्धी महत्त्वहीन खोज में विज्ञान उलझा नहीं रह सकता। उसे आगे बढ़ना ही है।

विशिष्ट सिद्धांत की दूसरी प्रारंभिक अभिधारणा है कि प्रकाश का वेग पर्यवेक्षक के सापेक्ष हमेशा एक-सा ही रहता है। मान लीजिए कि कोई एक व्यक्ति पत्थर का टुकड़ा १५ किमी प्रति घंटे की रफ्तार से फेंक

विशिष्ट सिद्धान्त की दूसरी प्रारम्भिक अभिधारणा : एक प्रयोग ?

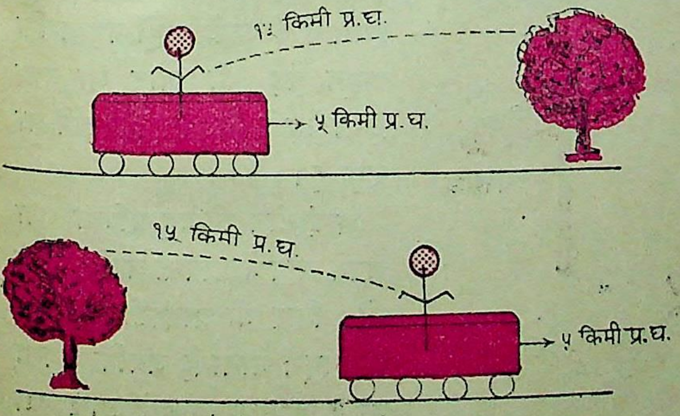

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि उस व्यक्ति के सापेक्ष पत्थर के टुकड़े की गति हमेशा १५ किमी प्रति घंटा ही होगी, इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह खड़ा है या चल रहा है। मान लें कि वह एक गतिशील गाड़ी पर से पत्थर फेंकता है तो उसके सापेक्ष पत्थर की गति वही होगी; यह अलग बात है कि पृथ्वी के सापेक्ष उसकी गति कम या अधिक हो। एक अन्य स्थिति में यदि वह एक ऐसे वाहन पर है जो एक पेड़ की ओर बढ़ रहा है और जिसका वेग ५ किमी प्रति घंटा है तो इस स्थिति में यदि वह पत्थर फेंकता है तो वाहन का वेग पत्थर के वेग में जुड़ जायेगा और पत्थर की पृथ्वी पर २० किमी प्रति घंटा की गति होगी। अगर वह वाहन पेड़ के विपरीत दिशा में जा रहा है तो पृथ्वी पर उस पत्थर की गति १० किमी प्रति घंटा होगी।

मान लें कि दूरस्थ अन्तरिक्ष में एक नक्षत्र है। हम दूरदर्शी से उसे देख रहे हैं। प्रकाश-किरण दूरदर्शी की ओर एक सेकण्ड में २,९९,४६० किमी की गति से बढ़ेगी। प्रकाश-किरण की यह गति नक्षत्र के सापेक्ष है। अगर पृथ्वी और नक्षत्र एक-दूसरे की ओर १,६०,००० किमी प्रति घंटे की रफ्तार से बढ़ रहे हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पर्यवेक्षक के लिए उस समय प्रकाश का वेग ४,५९,४६० किमी होगा। इसी तरह यदि नक्षत्र और पृथ्वी एक-दूसरे के सापेक्ष विपरीत दिशा में १,६०,००० किमी प्रति घंटे की रफ्तार से बढ़ रहे हैं तो पर्यवेक्षक के लिए प्रकाश का वेग १,३९,४६० किमी प्रति सेकण्ड हो जायेगा।

प्रकाश का वेग एक ही रहेगा

उपरोक्त दोनों परिणामों में प्रकाश का वेग भिन्न-भिन्न आता है। लेकिन यह आइंस्टीन की दूसरी अभिधारणा के विपरीत है। अतः उपरोक्त अनुमान को सही नहीं कहा जा सकता। अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रकाश का वेग समान ही रहेगा। प्रकाश-स्रोत से पर्यवेक्षक दूर जा रहा हो या उसके निकट जा रहा हो। दोनों स्थितियों में प्रकाश का वेग २,९९,४६० किमी ही रहेगा, इसका अर्थ यह हुआ कि नक्षत्र से चलने वाले प्रकाश का वेग २,९९,४६० किमी प्रति सेकण्ड पर्यवेक्षक के सापेक्ष रहेगा, इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि नक्षत्र या पर्यवेक्षक प्रति सेकण्ड एक-दूसरे के निकट आ रहे हैं या एक दूसरे से दूर जा रहे हैं। तो इसका अर्थ यह हुआ कि पिछले उदाहरण में व्यक्ति १५ किमी प्रति घंटे के ही वेग से पत्थर पेड़ की ओर फेंकेगा। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वाहन पेड़ की ओर जा रहा है या पेड़ से विपरीत दिशा में जा रहा है।

आइंस्टीन की यह अभिधारणा अपने-आप में अत्यन्त क्रान्तिकारी थी। फिर भी आइंस्टीन ने इसे महत्वपूर्ण माना है जबकि लगता यह है कि सामान्य बुद्धि धोखा खा

एक अन्य प्रयोग—क्या प्रकाश का वेग भिन्न-भिन्न भी हो सकता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही है। हालांकि प्रयोगों में यह अभिधारणा खरी उतरी है। आइंस्टीन के अनुसार यह अभिधारणं ब्रह्मांड का प्रारम्भिक सिद्धांत है।

ये दोनों अभिधारणाएं आइंस्टीन के समय में एक-दूसरे के विपरीत और एक-दूसरे को काटती हुई-सी रही हैं। अतः इन्हें लोगों के समक्ष प्रस्तुत करना भी एक समस्या रही। इनके प्रयोग के लिए कई समीकरण भी बने। इन समीकरणों ने कुछ समस्याएं ही प्रस्तुत नहीं कीं, बल्कि कुछ सम्भावनाएं भी दीं जिनके सम्बन्ध में बाद में प्रयोग हुए और सफल भी रहे।

इन अभिधारणाओं और इनसे सम्बंधित समीकरणों की परीक्षा के लिए एक भौतिक स्थिति चाहिये। चूंकि ये अभिधारणाएं पर्यवेक्षक के सापेक्ष निश्चित वेग से गतिशील वस्तु से और विशेषतः प्रकाश तरंगों से संबंधित हैं, अतः ऐसा पर्यवेक्षक चाहिये जो उस गतिशील वस्तु की व्याख्या कर सके। निश्चित ही प्रकाश तरंगों का विचित्र स्वभाव इस व्याख्या को प्रभावित करेगा, क्योंकि किसी वस्तु से प्रकाश तरंगों का परावर्तन ही पर्यवेक्षक को उस वस्तु को देखने में सहायता करता है। पर्यवेक्षक की व्याख्या उसके भौतिक गुणों से संबंधित होगी जिन्हें वह माप सकता है, जैसे उसकी लम्बाई, भार आदि। विशिष्ट सिद्धांत के अंतर्गत इनका बड़ा महत्त्व है।

राकेटों की सिकुड़ती हुई लम्बाई : एक समस्या, एक समाधान

मान लें कि एक ही तरह के दो राकेट हैं क और ख। ये अन्तरिक्ष में एक दूसरे के सापेक्ष निश्चित वेग से यात्रा कर रहे हैं। जब ख क के बगल से गुजर रहा होता है उस समय दोनों की घड़ियों में एक ही समय होता है। और ठीक उसी समय एक सुपर नोवा का विस्फोट होता है। क और ख दोनों को ही इस विस्फोट का ज्ञान नहीं है क्योंकि विस्फोट

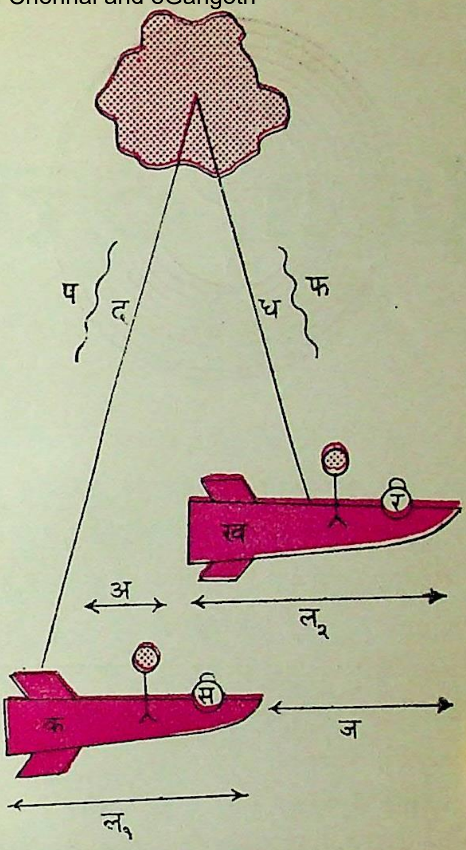

क और ख राकेटों में से किसकी लम्बाई सिकुड़ गयी है?

का प्रकाश अभी इन दोनों तक नहीं पहुंचा है।

कुछ समय के बाद क और ख तक विस्फोट का प्रकाश पहुंचता है। तब तक वे एक-दूसरे से अ की दूरी तक पहुंच चुके होते हैं।

दूसरी अभिधारणा के अनुसार क और ख तक प्रकाश एक ही वेग से एक-दूसरे के सापेक्ष पहुंचेगा। प प्रकाश का वेग क के लिए है और फ प्रकाश का वेग ख के लिए है, तो हम कह सकते हैं कि प–फ दोनों से विस्फोट की दूरी द और ध है और दोनों की घड़ियों में समय स और र है। अब उनकी एक-दूसरे से दूरी, सापेक्ष वेग, उनके कालान्तर और प्रकाश के वेग से संबंधित विश्लेषण प्रारम्भ होगा और फिर एक अद्भुत परिणाम हमारे सामने आयेगा कि दोनों में राकेटों की लम्बाई सिकुड़ गयी है। यह कैसे? **(क्रमशः)**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न ? वृत्त

(आज नाभिक भौतिकी का चिकित्सा सम्बन्धी अनुसन्धानों में व्यापक उपयोग हो रहा है। पिछले कुछ वर्षों में पश्चिमी जरमनी में अनेक नाभिक चिकित्सा केन्द्र खुले हैं। आइए आपको पश्चिमी जरमनी के हिडेलवर्ग कैंसर रिसर्च सेण्टर के इंस्टीट्यूट आव न्यूक्लियर मेडीसिन के अध्यक्ष पो. के. जी. स्कीर से मिलवायें।)

नाभिक चिकित्सा क्या है मि. स्कीर ?

पिछले कुछ वर्षों में नाभिक चिकित्सा के वाद में काफी कुछ सुनने को मिला है। नाभिक चिकित्सा के अंतर्गत कृत्रिम रेडियो सक्रिया आइसोटोपों द्वारा कुछ रोगों का निदान किया जाता है।

आपके देश में सर्वप्रथम ऐसे केन्द्र कहां खुले ?

हैम्वर्ग, फ्रैवर्ग और हिडेलवर्ग के यूनिवर्सिटी हास्पिटलों में सबसे पहले ये केन्द्र खोले गये। अब तो ये कई अस्पतालों और विश्वविद्यालयों में खुल चुके हैं।

क्या आपके देश में नाभिक चिकित्सा का कोई विभाग भी है ?

नाभिक चिकित्सा का एक विभाग है जिसके २५० सदस्य हैं। यह फ्रेवर्ग में १९६२ में स्थापित हुआ। नाभिक चिकित्सा की प्रथम पीठ हिडेलवर्ग विश्वविद्यालय में १९६३ में स्थापित हुई। दूसरी डूसेलडार्फ में १९६५ में।

नाभिक चिकित्सा अनुसन्धान सम्बन्धी क्रियाकलापों के विषय में कुछ बताइए।

क्रियाकलापों में मुख्यत: यूनिवर्सिटी हास्पिटल्स के नाभिक चिकित्सा विभाग ही भाग लेते हैं। ये नाभिक चिकित्सा विभाग रेडियो चिकित्सा विभाग और सामान्य चिकित्सा विभाग से सम्वद्ध हैं।

विभिन्न नाभिक चिकित्सा केन्द्रों के विभिन्न कार्य क्षेत्र हैं क्या ?

फ्रेवर्ग में मुख्यत: रुधिर के रोगों पर अनुसन्धान हुए हैं। हैम्वर्ग में रेडियो सक्रिय आयोडीन की सहायता से थायराइड के रोगों के अनुसन्धान पर वल दिया गया है। १९६० में हिडेलवर्ग ने रेडियो कोवाल्ट के माध्यम से यूटेरस कैंसर की चिकित्सा आरम्भ की। लेकिन इन सभी क्षेत्रों का देखा जाय तो कार्य क्षेत्र एक ही है। ●

अगले अंक में

प्रश्न वृत्त की परिधि में होंगे

नोबल पुरस्कार विजेता डा० हरगोविन्द खुराना

उनका व्यक्तित्व !

उनका अनुसन्धान !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या विज्ञान मानवता को नष्ट कर देगा

वी.वी. गिरि

मैं राष्ट्रीय पुनर्जीवन संग्राम से तब से सम्बन्धित रहा हूं जब एक तो मैं १९१४ में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के सम्पर्क में इंग्लैण्ड में आया था और दूसरे कुछ ही दिनों बाद आयरलैण्ड की क्रांति के जन्मदाता द वेलरा के निकट आया। और तब से ही विज्ञान, इसके विकास और आधुनिक युग में इसके व्यापक प्रभाव के प्रति मेरे मन में रुचि जागी। विशेष रूप से यन्त्रीकरण और मजदूर कल्याण योजना पर इसके प्रतिकूल प्रभाव ने मुझे विज्ञान और तकनीक की गहराई में उतरने और मानवीय दृष्टिकोण से वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त करने पर विवश किया। अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर और प्रायः आधी शताब्दी से अधिक समय तक मजदूर वर्ग की सेवा करने वाले एक ट्रेड यूनियन नेता के रूप में मैं यह स्वीकार करने लगा हूं कि मानव की मुक्ति आचार शास्त्रीय और आध्यात्मिक मानवतावाद के आधार पर वैज्ञानिक क्रांति को बढ़ावा देने में है।

आज का मानव वैज्ञानिक सफलता की नयी और आश्चर्यजनक ऊंचाइयों पर पहुंच गया है

वैज्ञानिक उपलब्धियों का व्यापक प्रभाव पड़ा है और आज ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं है जो उनसे अप्रभावित हो। साइबरनेटिक्स और कम्प्यूटरों का उदाहरण लें तो कह सकते हैं कि आज का मानव विश्व को आश्चर्यजनक भविष्य की ओर ले जा रहा है। वह वैज्ञानिक सफलता की नयी और आश्चर्यजनक ऊंचाइयों पर पहुंच चुका है। उसने ऐसे यन्त्रों का निर्माण किया है जो सोच सकते हैं और उसने ऐसे उपकरण तैयार कर लिये हैं जो अनन्त अन्तरिक्ष में झांक सकते हैं। उसने ऐसे पुलों का निर्माण कर लिया है जो जैसे समुद्रों को ही लांघ जायेंगे। उसने ऐसे भवनों को खड़ा किया जो मानों आसमान को छू लेंगे। मानव निर्मित वायुयानों और अन्तरिक्षयानों ने दूरी को बहुत घटा दिया है और काल को शृंखलाओं में रखकर सितारों की ओर यात्राएं की हैं। फिर भी मनुष्य शांति-सुख, मस्तिष्कीय एकात्मता, विश्व शांति, भाईचारे और समानता के लिए संघर्ष करता हुआ अंधेरे में भटक रहा है। यही वह स्थिति है जब मानवतावादी दर्शन हमारी रक्षा करता हुआ दिखायी पड़ता है।

मानव-अंगों का प्रतिरोपण : एक वरदान

विज्ञान सम्पूर्ण विश्व का है और इसकी उपलब्धियां भी सम्पूर्ण विश्व की है। मानव के क्रियाकलापों का कोई भी क्षेत्र वैज्ञानिक उपलब्धियों और विकास से अछूता नहीं है। अगर हम ऐसे आश्चर्यजनक अनुसन्धानों और उपलब्धियों की सूची बनाने लगें जिन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व के लोगों को चकित कर दिया है तो थक जायेंगे। लेकिन चिकित्सा, परमाणु-शक्ति, साइबरनेटिक्स, इलेक्ट्रानिक्स के क्षेत्र में हुई कुछ महत्वपूर्ण वैज्ञानिक क्रांतियों का उल्लेख किये बिना नहीं रह सकता। हृदय प्रतिरोपण की तकनीक पर विस्तारपूर्वक कुछ कहा जा सकता है। जब तक एक अश्वेत जीवित था एपार्टहीड नियम के अन्तर्गत उसका हृदय घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। लेकिन वही हृदय उसके मरने के बाद एक श्वेत के जीवन का कारण बनता है। मानव अंगों का प्रतिरोपण इस तरह सारी मानवता के लिए एक अपूर्व वरदान बना है। एक तरफ तो इस तकनीक ने असमय ही मौत के जबड़े में जाती हुई कितनी ही जिन्दगियों को बचा लिया है और दूसरी तरफ इसके अनुसन्धानकर्ता ने मानवता की महत्त्वपूर्ण सेवा तो की ही है, साथ ही नफरत की उस दीवार को भी ध्वस्त किया है जो मनुष्य को मनुष्य से पृथक करती है। मृत्यु के बाद और विशेष परिस्थितियों में यह श्वेत और अश्वेत का हृदय-मिलन साधारण बात नहीं है। मानवता-वादी भावना से वैज्ञानिक अनुसन्धानों के संचालन और विज्ञान तथा मानवता को निकट लाने की दिशा में यह एक महत्त्वपूर्ण कदम हो सकता है।

पिछले ३५० वर्षों में विज्ञान–सत्य की व्यग्र खोज–ने बड़ी उन्नति की है और विशेष रूप से पिछले २५ वर्षों में सम्पूर्ण विश्व के वैज्ञानिकों ने इतनी तीव्रता से अनुसन्धान किये हैं कि कल जो बातें काल्पनिक लगती थीं वे आज वास्तविक बन गयी हैं। चन्द्रमा पर मानव का पहुंचना एक दूर की सम्भावना नहीं है। अन्तरिक्ष, काल और दूरी पर विजय आजकल का नियम बन गया है। चिकित्सा के क्षेत्र में हुए नवीनतम अनुसन्धानों ने मानव की आयु की सीमा में प्रत्यक्ष रूप में वृद्धि की है। पिछले १०० वर्षों से तकनीकी दृष्टि से एक विकसित देश में मानव को आयु एक तिहाई बढ़ी है। विकासरत देशों में भारत में ही स्वतन्त्रता प्राप्ति से अब तक व्यक्ति की औसत आयु २३ वर्ष के बजाय ५० वर्ष हो गयी है। भयानक बीमारियों का, जो कभी घातक मानी जाती थीं, विश्व के अनेक भागों में उन्मूलन हो चुका है। अपने देश की ही हम बात करें तो टायफायड, मलेरिया और क्षय जो कुछ वर्ष पहले अनेक लोगों की मृत्यु का कारण बने हुए थे, अब पूर्णतः नियन्त्रण में आ चुके हैं, हालांकि अभी पूरी तरह इनका खात्मा होना बाकी है। भौतिक सुविधाएं यातायात और संचार-व्यवस्था के रूप में पूरी तरह विकास कर गयी हैं। रेडियो और टेलीविजन के माध्यम से कुछ ही सेकण्डों में विश्व के एक कोने की बात दूसरे कोने तक पहुंच जाती हैं। बेहतर सुविधाएं विकसित देशों में उपलब्ध हैं और ये अपने विकास की चरम सीमा तक पहुंची हुई हैं। आज से पचास वर्ष पहले जो सुविधाएं मात्र धनी व्यक्तियों के लिए ही उपलब्ध थीं, आज सामान्य जन के लिए भी उपलब्ध हैं। लेकिन इन सबके साथ मानव-मानव में दूरी बढ़ी है और आर्थिक जीवन में विषमताएं भी बढ़ रही हैं। यह बात कभी-कभी हमें यह सोचने पर भी विवश कर देती है कि क्या वास्तव में सभ्यता का विकास हुआ है? लेकिन विकास क्या है जबकि यह मानव के प्रति कल्याणकारी और उसे सुख देने वाला नहीं है? यह प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक व्यक्ति का उत्तरदायित्व है कि वह धन और वैभव को आपस में बांटे—अगर पूरी तरह नहीं तो कम से कम जायज तौर पर तो अवश्य ही।

क्या हमें अपने प्रयत्नों में पूरी तरह सफलता मिली है?

कहा जाता है कि बीसवीं शताब्दी में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

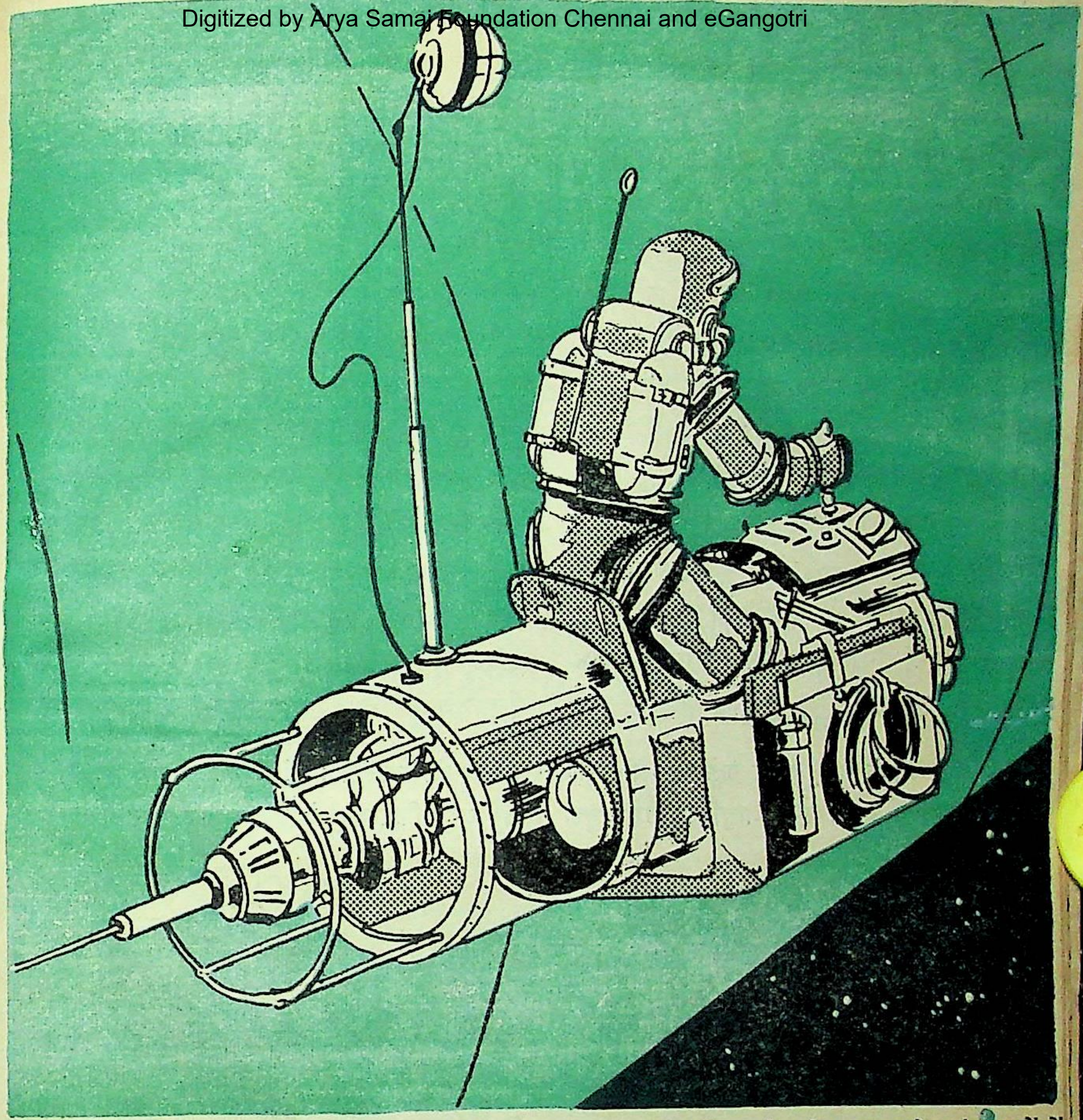

मानव-निर्मित वायुयानों और अन्तरिक्षयानों ने दूरी को बहुत घटा दिया है और काल को शृंखलाओं में रखकर सितारों की ओर यात्राएं की हैं…

ग्रन्धविश्वासों और भावनाओं पर विजय प्राप्त कर ली गयी है, पर क्या विश्वासपूर्वक यह कह सकते हैं कि हमें ग्रपने प्रयत्नों में पूरी तरह सफलता मिली है ? विध्वंसकारी शस्त्रों के निर्माण ने और विशेष रूप से परमाण्विक ग्रायुधों ने मानवता के लिए एक विकट संकट उपस्थित कर दिया है। यह डेमोक्लीज की तलवार की तरह है जो बड़े और छोटे राष्ट्रों के सिरों पर लटक रही है, और जिनके पास यह है वे भी तो ग्रपने को पूर्णतः सुरक्षित नहीं समझ सकते। सम्भवतः बढ़ते हुए परमाणु ग्रायुधों से ग्राज विश्व को सर्वाधिक भय है।

ग्रकेले विज्ञान ही इस दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति के लिए जिम्मेदार नहीं है। सत्य का ग्रन्वेषण करने वाले वैज्ञानिक की यह धारणा कभी नहीं होती कि उसकी खोजों के परिणामों का उपयोग मानव की समाप्ति के लिए होगा। ज्ञान और उपलब्धियों पर दुर्भाग्यवश कुछ ही राष्ट्रों और व्यक्तियों का ग्रधिपत्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

स्थापित हो गया है जो शक्तिशाली हैं और सिर्फ एक बटन दवाकर मानव की सभी आशाओं-आकांक्षाओं को नष्ट कर सकते हैं। बीसवीं शताब्दी का यह महान दुर्भाग्य है।

प्राचीन काल में हमारे महर्षि अहम पर विजय प्राप्त करके उपलब्धियों के अन्यतम शिखर पर पहुंच गये थे—मानव के लिए अपने अहम पर विजय प्राप्त करना बहुत बड़ी बात है। वैज्ञानिक और मानवतावादी कन्धे से कन्धा मिलाकर ही सभ्यता के प्रगतिवादी अभियान को आगे बढ़ा सकते हैं···

मानव को शांति और प्रसन्नता तब तक नहीं प्राप्त हो सकती जब तक कि जीवन के वास्तविक दर्शन की परिभाषा न की जाय, और यह न बताया जाय कि इसका प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में क्या महत्त्व है। जीवन की पूर्णता—जो आन्तरिक शांति और सर्वोच्च प्रसन्नता है—के लिए धर्म और विज्ञान दोनों समान रूप से आवश्यक हैं। विज्ञान प्रकृति के रहस्यों को भेदकर आर्थिक सम्पन्नता उपलब्ध कराता है जबकि धर्म जीवन के एक उपयुक्त दर्शन की व्याख्या करता है—जीवन जो सत्यं शिवं सुन्दरम् है।

विज्ञान और मानवतावाद के मध्य संघर्ष निरन्तर विद्यमान है। कुछ लोगों का यह खयाल है कि निकट भविष्य में विज्ञान और मानवतावाद के आपसी सम्बन्ध बिगड़ेंगे। इस तरह की धारणा भ्रान्तिमूलक है। एक वैज्ञानिक ने ठीक ही कहा है : 'वास्तव में हम सब लोगों ने वह नहीं देखा है जो होने जा रहा है।' हम आशा कर सकते हैं कि भविष्य में मानव के परिवेश पर नियन्त्रण बढ़ेगा और

शायद कल मानव के लिए दूरस्थ ग्रहों की यात्रा साधारण बात हो जायेगी। छोटे-छोटे यानों में यात्री पृथ्वी की कक्षा में भ्रमण करते अन्तरिक्ष स्टेशन तक पहुंचेंगे और फिर वहां से इनका राकेट ग्रहों की ओर रवाना होगा

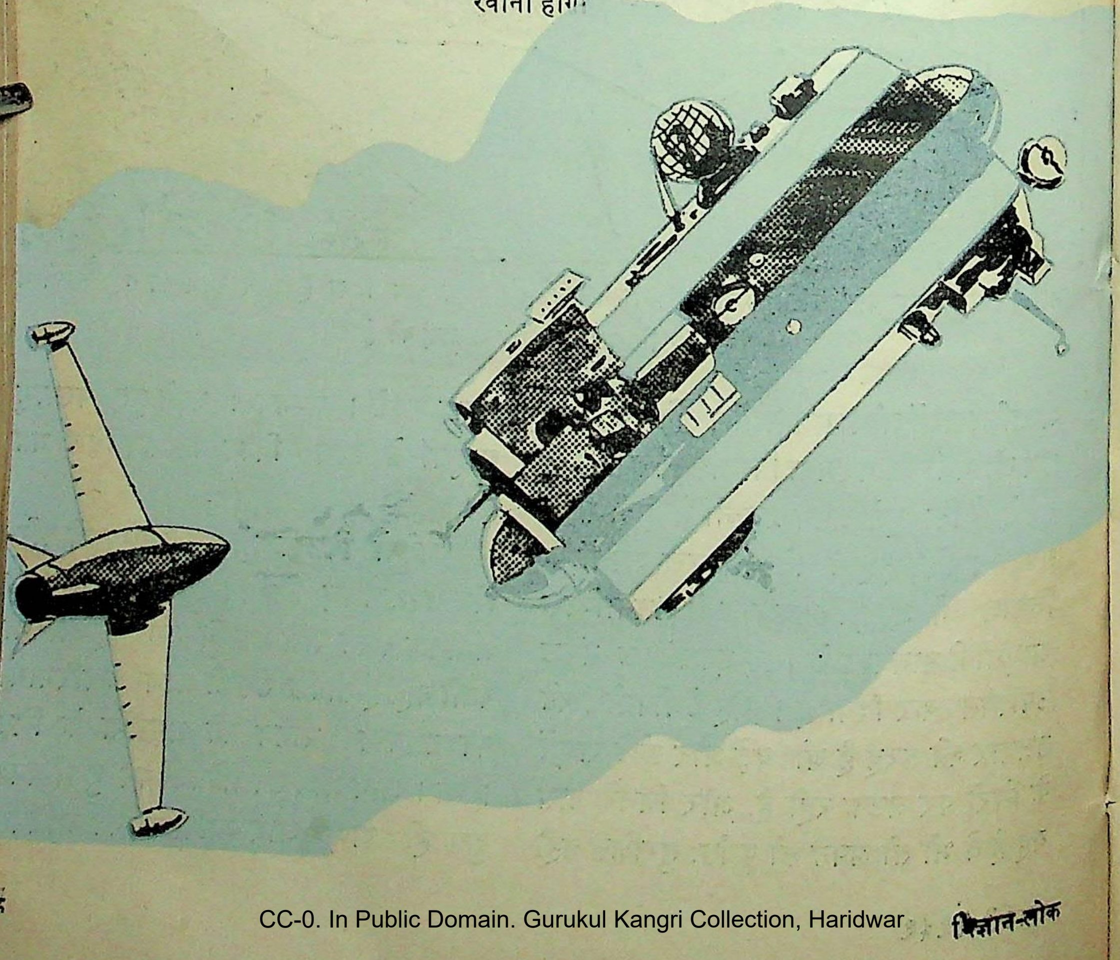

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही औषधियों तथा अंग प्रतिरोपण के विकास से उसकी मनोवैज्ञानिक तथा शारीरिक क्रियाओं पर भी नियन्त्रण बढ़ेगा। इन सब सफलताओं द्वारा जाति, रंग, भाषा आदि पर मानव की विजय होगी, और मानव पर इस सबका गम्भीर रूप से प्रभाव पड़ेगा।

क्षेप्यास्त्र एवं परमाणु आयुधों का मानव की चेतना पर प्रभाव पड़ा है

हालांकि ये परिवर्तन क्रांतिकारी हैं फिर भी मानव की चेतना पर युद्ध के आयुधों ने महत्त्वपूर्ण प्रभाव डाला है। क्षेप्यास्त्र एवं परमाणु आयुध——परमाणु बम और हाइड्रोजन बम——मानव ज़ाति को एक विकट स्थिति के अधीन किये हुए हैं। जहां तक इन शस्त्रों के विनाशकारी होने का प्रश्न है, ये सम्पूर्ण मानवता को समाप्त कर सकते हैं; और जहां तक इनसे लाभ का प्रश्न है, ये मानव समाज को एक वास्तविक स्वर्ग में परिवर्तित कर सकते हैं।

वैज्ञानिक अनुसन्धानों की द्विमुखी प्रकृति ज्ञान के विस्तार का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। प्रकृति पर विजय प्राप्त करने की जो शक्ति मानव ने प्राप्त कर ली है यदि उसका उचित प्रयोग नहीं हुआ तो अनुसन्धानकर्ताओं की सम्पूर्ण जाति ही समाप्त हो जायेगी। जब तक हिंसा और अतिक्रमण का राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में अधिपत्य है, यह कल्पना करना कठिन है कि एक सामूहिक विनाश से बचा जा सकता है। यदि हम इन विनाशकारी आयुधों और इनकी शृंखला-प्रक्रिया से बचना चाहते हैं जो सम्पूर्ण मानव सभ्यता को नष्ट कर सकती है, तो हमें शक्ति के प्रयोग को बन्द कर देना पड़ेगा।

समय की मांग यह है कि मानव के प्रयत्नों को नयी दिशा मिले। औद्योगिक रूप से विकसित देशों की राजनीतिक उन्नति और आर्थिक ढांचे को सैनिक क्रूरता दिखाने का अवसर नहीं दिया जाना चाहिये। ●

फोल्डिंग विमान

अमरीका की रेयन एरोनाटिकल कम्पनी के दो इंजीनियरों पीटर गिराई और फ्रेड लैण्डग्राफ ने एक छोटा सा विमान तैयार किया है जिसे स्टेशन वैगन पर रखकर ले जाया जा सकता है। इसके छह हिस्से अलग-अलग किये जा सकते हैं, और हर हिस्से का इतना कम वजन होता है कि एक आदमी आसानी से उठा ले। ७५ मील प्रति घण्टे की गति से चल सकने वाला यह बिमान १०० फुट की ऊंचाई तक उड़ सकता है।

शल्य उपचार द्वारा मन्द पाचन क्रिया

कई बार चिकित्सा ऐसे आपरेशन करते हैं जिनमें भोजन प्रणाली में भोजन के निरन्तर चलते रहने से बाधा पहुंचती है। अतः उसे किसी निश्चित स्थान पर नियन्त्रित कर देना अथवा उसकी गति को तथा पाचन एवं पोषण प्रक्रिया की गति को मन्द करना आवश्यक हो जाता है। इस दिशा में ब्रिटेन के हैमरीमश रायल पोस्ट ग्रेजुएट मेडीकल स्कूल के कुछ शल्य चिकित्सकों ने सफल प्रयास किये हैं। वे एक साथ कई सम्भावित पद्धतियों पर परीक्षण कर रहे हैं।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ्लू
एक भयंकर हमला होने वाला है

समस्त रोगों में फ्लू या इन्फ्लुएंजा का कोई मुकाबला नहीं है क्योंकि विश्व-व्यापी रोग के रूप में यह बड़ी तेज रफ्तार से फैलता हुआ सारी दुनिया को अपनी लपेट में ले लेता है। मोटे तौर पर हर दस साल बाद इसका प्रकोप होता रहता है। वैज्ञानिक परीक्षणों के अनुसार जिस आदमी ने एक बार फ्लू का सामना कर लिया है, उसे फिर दुबारा उसी या उससे घनिष्ट रूप से सम्बद्ध वाइरस या विषाणु से फ्लू शायद ही होता हो क्योंकि उसमें एक तरह की प्राकृतिक रोग-निरोध क्षमता का विकास हो जाता है। परन्तु विषाणु फिर नया रूप बदलकर आते हैं और किसी को नहीं छोड़ते। जब भी कोई नया फ्लूकारी विषाणु करवट बदलकर उठता है तो एक नया विश्वव्यापी रोग फैल जाता है। अभी तक यह मालूम नहीं हो सका कि इन नये-नये विषाणुओं के पैदा होने के क्या कारण हैं। १९४७ में फ्लू फैला और फिर १९५७ में भी, जबकि सारी दुनिया एशियाई फ्लू की गिरफ्त में आ गयी थी।

१९५७ के एशियाई फ्लू के विषाणु का नामकरण वैज्ञानिकों ने ए–२ किया था, लेकिन पिछले दिनों ही भारत में फ्लू की लहर फैलाने वाले विषाणु ए–२ से बिलकुल भिन्न हैं। लगता है उस पुराने विषाणु ने इस बार अपने-आपको इस हद तक बदल लिया है ताकि ज्यादा से ज्यादा लोगों की नाक में दम कर सके।

मध्य जुलाई की बात है कि हांगकांग के स्वास्थ्य अधिकारियों ने वहां फ्लू फैलने की खबर दी। वहां विश्व स्वास्थ्य संगठन का राष्ट्रीय इन्फ्लुएंजा केन्द्र है, जिसकी संचालिका डा. डब्ल्यू. के. चांग नामक विषाणुविज्ञानी महिला हैं। उन्होंने तुरन्त ही नगर में फैले फ्लू पीड़ित रोगियों से रोगकारी विषाणु प्राप्त किया और उसे पृथक करके जेट विमान से वि. स्वा. सं. के मिल हिल, लंदन स्थित विश्व इन्फ्लुएंजा केन्द्र में भेज दिया। इस केन्द्र के डाइरेक्टर डा. हेलिओ पेरीरा ने इसकी परीक्षा की तो उन्हें ज्ञात हुआ कि इस फ्लू का विषाणु १९५७ वाले ए–२ विषाणु से बहुत भिन्न है। तुरन्त उन्होंने वि. स्वा. सं. के जेनेवा स्थित मुख्यालय को खबर भेजी कि फ्लू सम्बन्धी आपतिकालीन कदम उठाये जायें।

संकट के समय की एक योजना

खबर पहुंचने को देर थी कि दुनिया भर में ५५ देशों में फैले ८० राष्ट्रीय इन्फ्लुएंजा केन्द्रों को नयी किस्म का फ्लू विषाणु पैदा हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

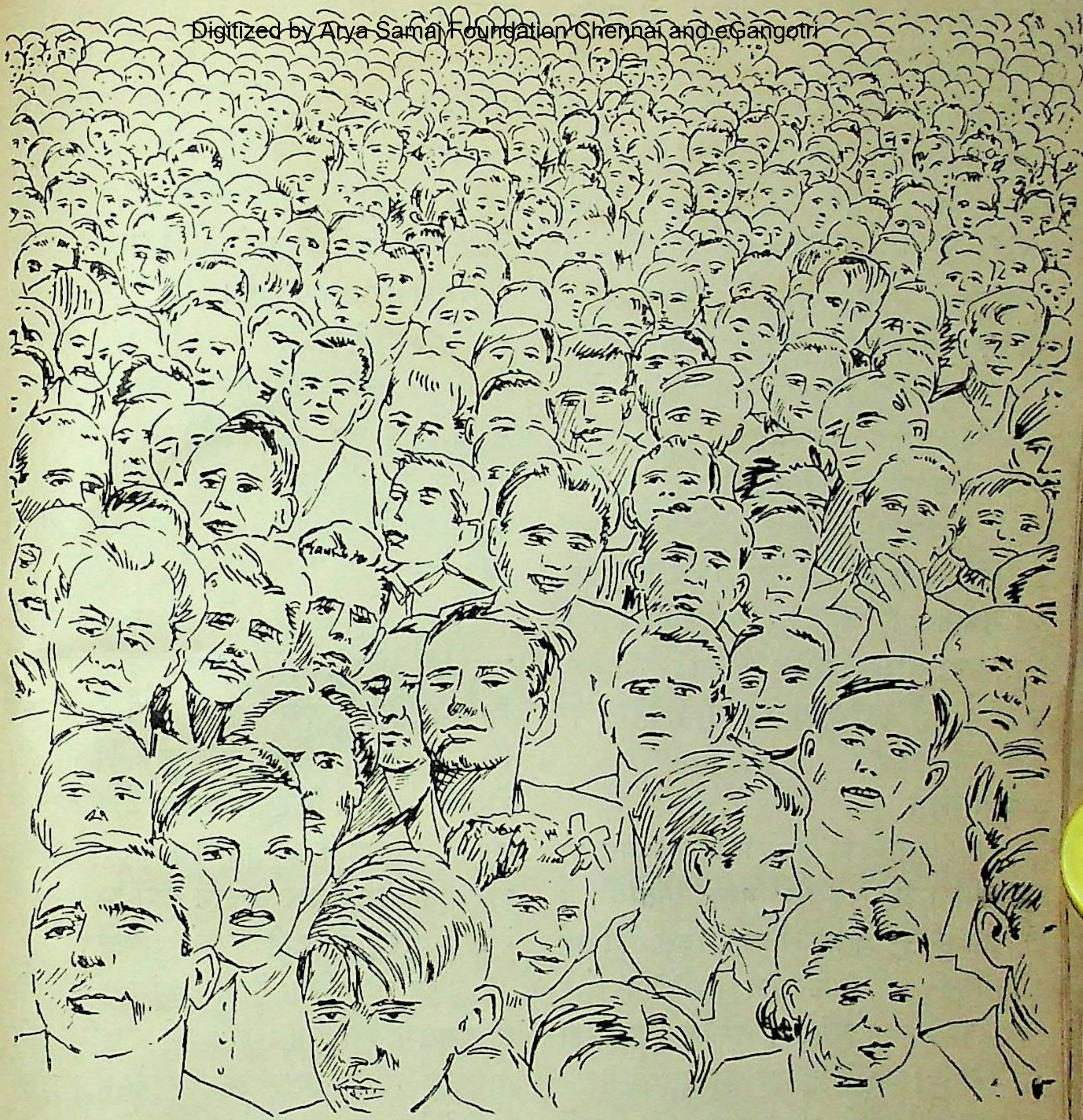

लोगों की भीड़ है और रोगों के बढ़ते हुए हमले हैं…एक हमला हांगकांग फ्लू का भी है

जाने की सूचना भेजदी गयी। साथ ही उन्हें यह भी बताया गया कि यह विषाणु वि. स्वा. सं. विश्व इन्फ्लुएंजा केन्द्र लंदन और अमरीका के एटलांटा, जार्जिया स्थित अन्तर्राष्ट्रीय इन्फ्लु-एंजा केन्द्र में उपलब्ध है। इन दोनों जगहों से इस विषाणु को प्रयोगशालाओं के लिए और टीके बनाने के लिए मंगवाया जा सकता है। इन सभी केन्द्रों को यह भी कहा गया कि वे सभी आयु-समूहों में व्यक्तियों की रोग-निरोध क्षमता को जांच करके उसकी रिपोर्ट वि. स्वा. सं. को भेजें।

अभी तक प्राप्त प्रारम्भिक रिपोर्टों से पता चलता है कि आमतौर पर जो लोग कुछ महीने पहले तक किसी स्थानीय विषाणु के कारण फ्लू पीड़ित रहे हैं या फिर उसका टीका लगवा चुके हैं, वे भी इस नये विषाणु के प्रति किसी रोग-निरोध क्षमता का प्रमाण दे नहीं रहे।

तेज रफ्तार विषाणु

हांगकांग में जुलाई के आखिरी दो-तीन हफ्तों में कोई ५ लाख व्यक्ति इस नये विषाणु द्वारा फैलाये गये फ्लू से पीड़ित हो गये। तब

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से वि. स्वा. सं. को इस विषाणु की गति-विधियों के जो समाचार मिल रहे हैं उनसे इसकी तेज रफ्तार का पता चलता है। मध्य अगस्त में सिंगापुर पर हमला बोला गया और अभी महीना पूरा भी न हुआ था कि ताईवान, मलयेशिया, दक्षिण वियतनाम और फिलिपीन्स इसकी लपेट में आ गये। सितम्बर तक मद्रास, बम्बई, ईरान, थाइलैण्ड और आस्ट्रेलिया के उत्तरी क्षेत्र इसके चंगुल में थे। हांगकांग या वियतनाम से समुद्री जहाजों द्वारा यह जापान पहुंच गया है और सं. रा. अमरीका के पश्चिमी समुद्र तट पर लहरा रहा है, हालांकि अभी तक वहां से फ्लू के प्रकोप की सूचना नहीं मिली है। विमान यात्रियों के साथ-साथ और भी अनेक देशों में इसकी घुसपैठ जारी है और जहां-तहां छोटे पैमाने पर फ्लू फैल गया है।

प्रकोप बढ़ेंगे

इस फैलाव का सबसे दिलचस्प मामला यह सामने आया है कि मध्य सितम्बर में तेहरान में फ्लू का प्रकोप हुआ, जिसे वहां पर आयोजित उष्णकटिबंधीय चिकित्सा और मलेरिया के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन से जोड़ा जा रहा है। पहले तो यह फ्लू इस सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों में, जिनमें से कुछ दक्षिण-पूर्व एशिया और पश्चिमी प्रशांत क्षेत्र के थे, फैला, फिर नगरवासियों में और बाद में ईरान के अन्य भागों में जा पहुंचा।

हांगकांग में प्रकट होने के दस हफ्तों के अन्दर ही आनन-फानन में संक्रमण के तीव्र प्रसार और सीमा-सबंधी जांचों से अधिकांश व्यक्तियों में पर्याप्त रोग-निरोध क्षमता के अभाव से यह आशंका उठती है कि जनवरी ६९ से अप्रैल ६९ तक उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्धों में जाड़े के महीनों में इस रोग के बड़े पैमाने पर प्रकोप होंगे।

कोई विशेष उपचार न होने के कारण सुरक्षा का सबसे अच्छा साधन टीका लगवाना ही है, बशर्ते कि टीका नये विषाणु से बनाया गया हो, क्योंकि पहले के विषाणुओं से बनाये गये टीकों का नये फ्लू विषाणु पर कोई असर नहीं होता।

अतः जहां भी ये टीके उपलब्ध हों वहां उन व्यक्तियों को प्राथमिकता मिलनी चाहिये जिन्हें फ्लू के कारण जान चली जाने का खतरा है—जैसे वृद्ध, अशक्त, हृदय तथा फेफड़े के रोगों के मरीज। फिर जब ज्यादा टीके मिलने लगें तो जनसेवा के अत्यावश्यक विभागों, जैसे परिवहन और संचार विभाग तथा अस्पतालों के कर्मचारियों को टीके लगाने चाहिये।

फिर भी दुनिया के अधिकांश लोगों को टीके सुलभ नहीं होंगे। लेकिन वे स्वयं अपनी सहायता करके खतरा घटा सकते हैं। उन्हें चाहिये कि फ्लू से पीड़ित होते ही आराम करें और तब तक न उठें जब तक बुखार उतर न जाये।

इससे एक फायदा यह होगा कि रोग उतनी तेजी से नहीं फैल पायेगा। ●

दो प्रकार के मनुष्य

ब्रिटिश चिकित्सा अनुसन्धान परिषद् की व्यावहारिक मनोविज्ञान अनुसन्धान यूनिट के वैज्ञानिकों के अनुसार मनुष्य दो प्रकार के होते हैं—प्रातःमुखी और संध्यामुखी। मनुष्यों के रक्त का तापमान प्रति दिन समयानुसार घट-बढ़ जाता है।

आइसोटोप के सहारे औषधियों की शुद्धता का नियन्त्रण

चेकोस्लोवाकिया के कामेनियस विश्वविद्यालय में ऐसा रेडियोमापी विश्लेषक तैयार किया गया है जो आइसोटोप के सहारे औषधियों के निर्माण में उनकी शुद्धता को नियन्त्रित किये रह सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा बच्चा कब ?

'कितना होनहार है ये बच्चा आपका!'

इसे आपके प्यार और दुलार की बहुत जरूरत है। डाक्टर बताते हैं कि पहले ४-५ वर्षों में बच्चे के दिमाग और बढ़वार की बुनियाद पड़ती है। यदि आप दूसरा भी ऐसा फूल सा बच्चा चाहती हैं तो कम से कम तीन-चार साल बाद उसके बारे में सोचिये।

"लेकिन क्या बच्चे का जन्म अपने बस की बात है?"

"जी हां, बच्चे का जन्म बिल्कुल अपने बस की बात है। आज ऐसे अनेक तरीके मौजूद हैं, जिनके इस्तेमाल से बच्चा तभी होगा, जब आप चाहेंगे।

किसी भी परिवार नियोजन केन्द्र में जाकर आप इसके बारे में मुफ्त सलाह ले सकते हैं।

याद रखिये . . .

दो या तीन बच्चे...... बस

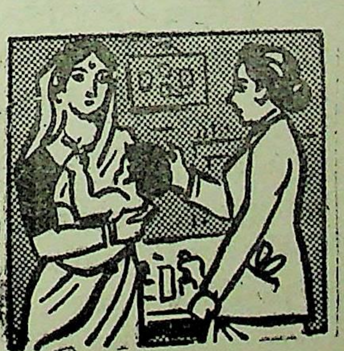

davp 68/28

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

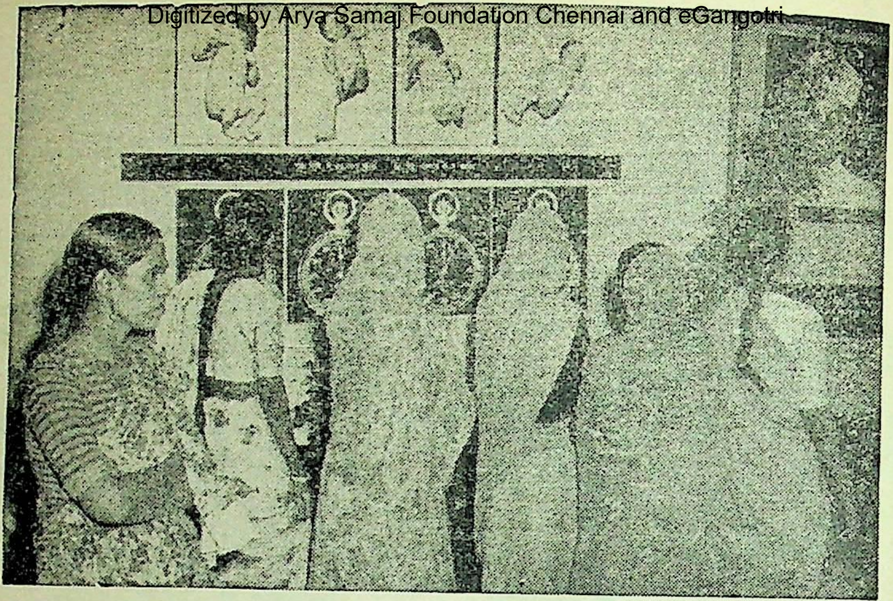

परिवार नियोजन कार्यक्रम

अनुमान लगाया गया है कि दिसम्बर १९६८ में भारत की जनसंख्या ५२ करोड़ ९० लाख थी। इस देश की आबादी विश्व जनसंख्या का १४ प्रतिशत है जबकि इसका क्षेत्रफल केवल २·४ प्रतिशत है।

हमारी आबादी प्रतिवर्ष २·५ प्रतिशत की दर से बढ़ रही है। प्रत्येक डेढ़ सेकण्ड के बाद एक बच्चा जन्म लेता है और इस प्रकार प्रतिवर्ष २ करोड़ १० लाख बच्चे जन्म लेते हैं। लेकिन जनसंख्या में वार्षिक वृद्धि १ करोड़ ३० लाख के हिसाब से होती है। इस प्रकार २६ वर्षों में हमारी आबादी १०० करोड़ हो जायेगी।

जनसंख्या में इस बेतहाशा वृद्धि से २० वर्षों की हमारी आर्थिक प्रगति से मिलने वाला लाभ समाप्त हो जाता है। देश में प्रति व्यक्ति जितना भोजन उपलब्ध है, उसमें केवल १२·२ औंस से १३·४ औंस की ही वृद्धि हुई है।

देश में चलाये जा रहे परिवार नियोजन कार्यक्रम का लक्ष्य यह है कि अगले दस वर्षों में जन्म दर प्रति हजार ४१ से घटाकर २३ की जाय। कार्यक्रम पूरी तरह स्वैच्छिक है।

परिवार नियोजन कार्यक्रम को चलाने के लिए नगरों में १,८८२ केन्द्र और गांवों में २४,३६६ केन्द्र खोले गये हैं। इनके अलावा ९,१२९ चिकित्सा संस्थाओं में परिवार नियोजन सम्बन्धी सलाह और साधन दिये जाते हैं। गर्भ-निरोध की गोलियों के सम्बन्ध में ३१५ आजमाइशी योजनाओं की स्वीकृति दी गयी है, जिनमें १७६ योजनाएं चल रही हैं।

देश में १० अक्तूबर १९६८ तक नसबन्दी तथा गर्भनिरोध के ४७ लाख २२ हजार ४९२ आपरेशन किये जा चुके थे और २५ लाख ४८ हजार ९३३ लूप लगाये जा चुके थे। परिवार कल्याण केन्द्रों से सम्बद्ध ३,५९५ लूप केन्द्र चल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहे थे और ३६८ चलती-फिरती टुकड़ियां चल रही थीं।

देश में परिवार नियोजन की अनेक विधियां प्रचलित हैं, जिनमें लूप, नसबन्दी और गर्भ-निरोधक आपरेशन, कण्डोम, डायफ्राम, झागदार टिकिया और जेली शामिल हैं। अच्छी विधियों के विकास के लिए अनुसंधान का कार्य बराबर चल रहा है। राज्य की ओर से परिवार नियोजन-सम्बन्धी सलाह और साधन मुहय्या करने की निःशुल्क व्यवस्था है।

सरकारी अस्पतालों, दवाखानों और केन्द्रों में कण्डोमों का निःशुल्क विवरण किया जाता है। बाजार में भी १५ पैसे में तीन कण्डोम मिल सकते हैं। गांवों में तीन कण्डोम ५ पैसे में ही मिल सकेंगे।

लगभग १० करोड़ दम्पतियों को कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रेरित करने की आवश्यकता है। इस कार्य में रेडियो, टेलीविजन, समाचारपत्र और सिनेमा आदि जन-सम्पर्क के साधनों का पूरा उपयोग किया जा रहा है। लगभग २५ लाख लोगों

सतना में परिवार नियोजन प्रदर्शनी में महिलाएं एक चित्र को देख रही हैं। चित्र में यह दिखाया गया है कि हमारी आबादी कितनी भयंकर गति से बढ़ रही है। हमारे देश में प्रत्येक डेढ़ सेकण्ड में एक और एक दिन में ५५ हजार बच्चे पैदा होते हैं

←

दिल्ली प्रशासन की क्षेत्रीय परिवार नियोजन अधिकारी लेडी डाक्टर सी. कपूर तथा श्रीमती एस. बागला, अलीपुर खंड में नरेला प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर आयीं। वे कुछ ग्रामीण महिलाओं से बातचीत कर रही हैं। महिलाओं के चेहरों के हाव-भाव से स्पष्ट पता चलता है कि परिवार नियोजन तथा परिवार नियोजन के सरल तरीकों की अधिक जानकारी प्राप्त करके वे बहुत खुश हुईं

↓

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri.

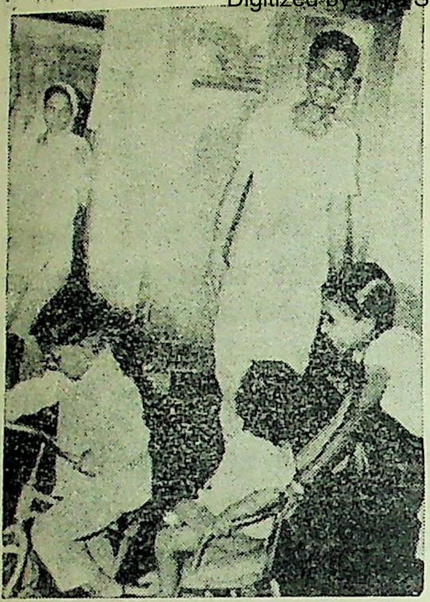

गुजरात के इस परिवार के लिए 'छोटा परिवार', 'सुखी परिवार' का संदेश साकार हो उठा है

को परिवार नियोजन-सम्बन्धी साहित्य भेजा जाता है ताकि ये अपने क्षेत्र के लोगों को प्रभावित कर सकें।

परिवार नियोजन कार्यक्रम को लगभग १ लाख २५ हजार प्रशिक्षित कार्यकर्ता और कार्यकर्त्रियां चला रही हैं।

बढ़ती हुई आबादी और घटती हुई सुविधाओं को देखते हुए हम सहज ही समझ सकते हैं कि आज के युग में परिवार नियोजन कितना महत्त्वपूर्ण है!

मध्य प्रदेश में परिवार नियोजन

तीसरी योजना के अंत में मध्य प्रदेश में ८२४ परिवार नियोजन केन्द्र चल रहे थे। प्रत्येक जिले में नसबंदी आपरेशन के लिए एक चलते-फिरते केन्द्र की स्वीकृति दी गयी है। इसके अलावा चलते-

जिला सतना (मध्य प्रदेश) के झिन्ना गांव के निवासी श्री परमेश्वरदीन ने अपनी नसबंदी करायी है। वह इस बात से बहुत खुश हैं कि अब उनके परिवार में वृद्धि नहीं होगी। श्री परमेश्वरदीन के १२ बच्चे हैं। (दो लड़कियों की शादी हो चुकी है, जो चित्र में नहीं दिखायी गयी हैं।)

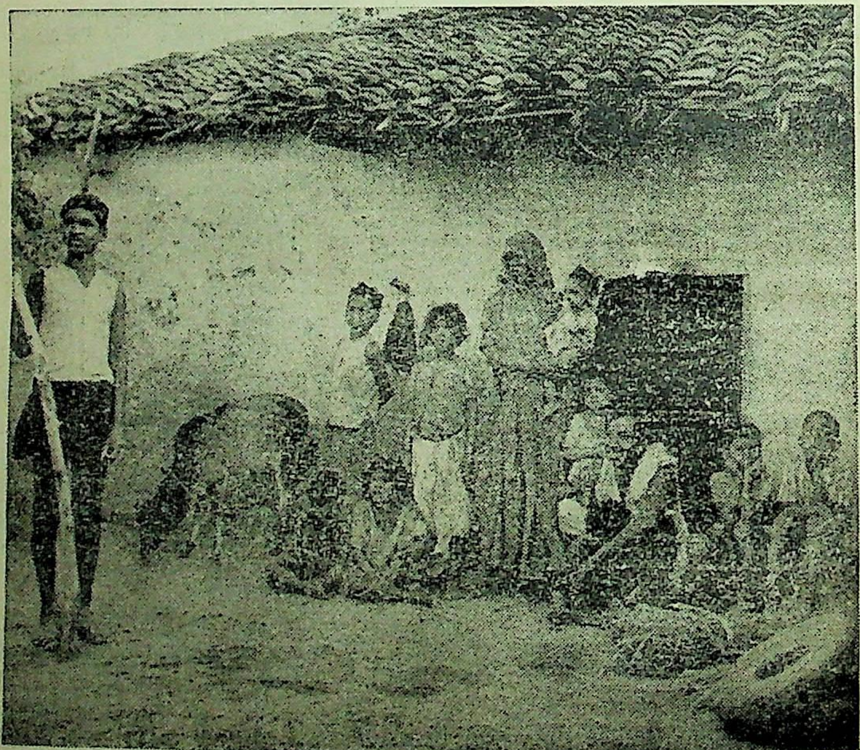

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

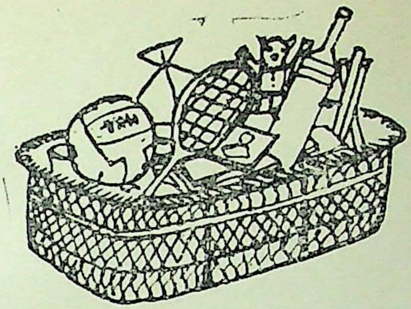

पालने की छुट्टी

पप्पू तीन साल का है और उसका यह पालना ? बस, उससे एक दिन छोटा। वे भी दिन थे, जबकि पप्पू के बिना पालना और पालने के बिना पप्पू नहीं था। धीरे-धीरे पप्पू बड़ा हुआ। वह घुटने के बल चलने लगा। अब पालने में झूलना उसे अच्छा न लगता। पालने की छुट्टी कर दी गई। लेकिन, पालने का क्या हो ? पप्पू सोचता रहा और उसने एक मज़ेदार तरकीब सोच निकाली। उसने रंग-बिरंगी किताबें, गुड़िया और बल्ले को पालने में रख दिया और फिर खुश...माँ तो जैसे फूली ही न समाई, बोली—"ज़रा देखिये तो अपने लाडले को। कितना खुश है।" पिता ने एक नज़र पप्पू पर डाली। फिर, हंसते हुए पत्नी से बोला—"पालने को हमने खूब लम्बी छुट्टी दी...ठीक ही किया था न ?"

जी हां: इन्होंने ठीक किया।

समझदार मां-बाप हमेशा परिवार नियोजन करते हैं। परिवार नियोजन का मतलब सिर्फ यही नहीं है कि बच्चे कम हों। बल्कि, इसका मतलब यह भी है कि बच्चे तभी हों, जबकि माता-पिता चाहते हों और उनकी परवरिश के लिये हर तरह से तैयार भी हों। बच्चे का जन्म अब एकदम संयोग की बात नहीं। बच्चे का जन्म अब आपके बस में है।

इसका श्रेय परिवार नियोजन को जाता है।

मुफ्त सलाह और सामान के लिये निकटतम परिवार नियोजन केन्द्र में जाइये।

davp 68/441

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

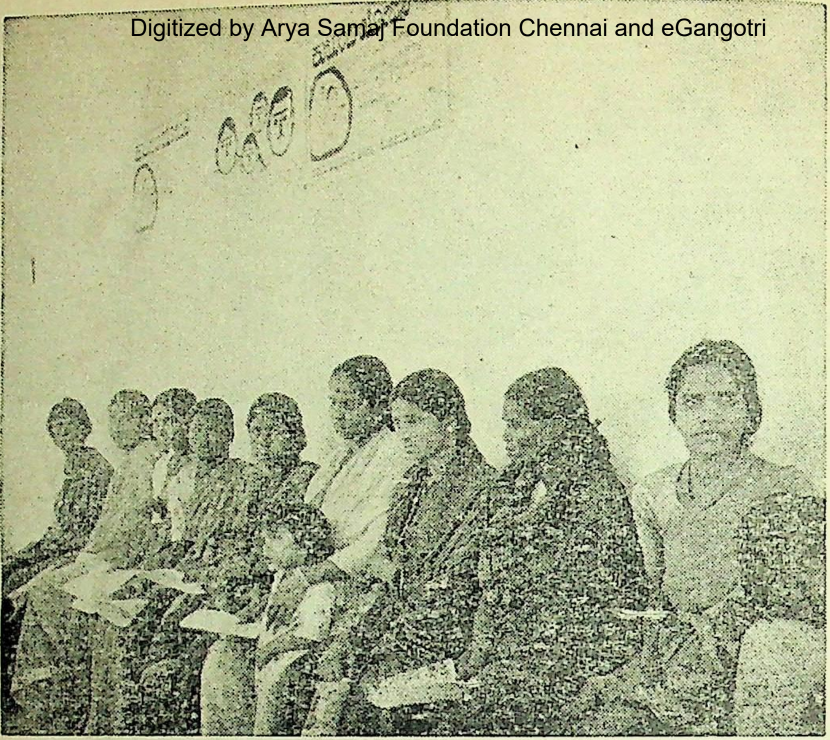

मैसूर के कृष्णराजपुरम् नामक स्थान पर लूप लगाने के लिए स्थापित किये गये शिविर में महिलाएं अपनी बारी का इन्तजार कर रही हैं

फिरते ५० लूप केन्द्रों की व्यवस्था की गयी है, जिनमें से प्रत्येक ५ लाख आबादी के लिए होगा।

परिवार नियोजन कार्यक्रम को सही दिशा में चलाने के लिए राज्य मंत्रिमंडल की एक उप-समिति गठित की गयी है। राज्य के स्वास्थ्य मंत्री, वित्त मंत्री, सार्वजनिक निर्माण मंत्री, शिक्षा मंत्री और समाज कल्याण मंत्री इसके सदस्य हैं। १९६६ में एक राज्य-स्तरीय समिति नियुक्त की गयी थी, जिसके अध्यक्ष मुख्य सचिव और सदस्य विभिन्न विभागों के अध्यक्ष और सचिव थे। इसी प्रकार जिला और खंड स्तर पर भी समितियां बनायी गयी हैं।

परिवार नियोजन कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देने के लिए इंदौर, जबलपुर और बिलासपुर में केन्द्र खोले गये हैं। मार्च १९६८ तक १४१ डाक्टर, १२८ स्वास्थ्य निरीक्षक, ४४२ विस्तार शिक्षक, ५२३ समाज-कार्यकर्ता और १४४ अन्य कर्मचारी इन केन्द्रों में प्रशिक्षित किये जा चुके थे। इनके अतिरिक्त ५१५ कर्मचारियों को अल्पकालीन प्रशिक्षण दिया गया है और ८ डाक्टरों को दिल्ली और बंबई में प्रशिक्षित किया गया है। हाल में भोपाल में एक परिवार नियोजन गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, बंगाल, उड़ीसा, आसाम और बिहार के प्रशिक्षण केन्द्रों के प्रशासनिक अधिकारियों और प्रशिक्षकों ने भाग लिया।

परिवार नियोजन के प्रचार के लिए राज्य के प्रत्येक जिले में फिल्म-प्रदर्शन की व्यवस्था की जा रही है। अब तक २० जिलों में यह व्यवस्था हो गयी है। प्रत्येक जिले और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र को फिल्म-प्रदर्शन का साज-सामान दिया जायेगा।

लूप लगाने का कार्यक्रम जुलाई १९६५ में राज्य के १५९ स्थायी और ४४ चलते-फिरते केन्द्रों में चालू किया गया था। मार्च १९६८ तक राज्य में ९०,१९१ लूप लगाये जा चुके थे। लूप लगवाने

080154

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्रियों की देखरेख के लिए स्त्री-रोग ...ज्ञों को सलाहकार नियुक्त किया गया है। ...ा डाक्टरों की कमी दूर करने के लिए ...ी स्वास्थ्य निरीक्षिकाओं और नर्सों को ... देने की योजना बनायी गयी है। लूप लगाने ... पूरी डाक्टरी जांच की जाती है और बाद ...ब जारी रहती है।

...ज्य के ५८० केन्द्रों में नसबंदी और गर्भ-...क के आपरेशन किये जाते हैं। इसके अलावा ... जिले और भोपाल नगर में चलते-फिरते ...की व्यवस्था है। १९६७-६८ में १ लाख ५२ ...४४० नसबंदी आपरेशनों का लक्ष्य रखा गया था, लेकिन १ लाख ७६ हजार १४८ आपरेशन किये गए। इस प्रकार ११५·०५ प्रतिशत सफलता मिली। सारे देश में प्रति हजार ३·५ आपरेशन की तुलना में राज्य में प्रति हजार ४·६ आपरेशन हुए। मार्च, १९६८ तक कुल ३ लाख ५२ हजार ४९९ नसबंदी आपरेशन किये गये। १९६८-६९ में २ लाख ३४ हजार ४०२ आपरेशनों का लक्ष्य है।

नसबंदी आपरेशन कराने के बाद भी यदि कोई पुरुष संतानोत्पत्ति चाहे तो वह इसके लिए अपना दुबारा आपरेशन करा सकता है। यह सुविधा इंदौर के अस्पताल में उपलब्ध है, जहां सात आपरेशन किये जा चुके हैं।

पिछले वर्ष सार्वजनिक संगठनों, स्थानीय निकायों और सरकारी संगठन द्वारा नगर और ग्रामीण क्षेत्रों के ४१ केन्द्रों को सरकारी अनुदान दिया गया। अब तक की प्रगति से यह विश्वास और दृढ़ हो जाता है कि परिवार नियोजन का राष्ट्रीय लक्ष्य समय पर पूरा हो जायेगा।

सूरत जिले के व्यारा ताल्लुक में नसबंदी आपरेशन अब काफी लोकप्रिय हो गया है। चित्र में व्यारा केन्द्र पर आपरेशन कराने वाले २२ लोगों को पंक्ति में दिखाया गया है

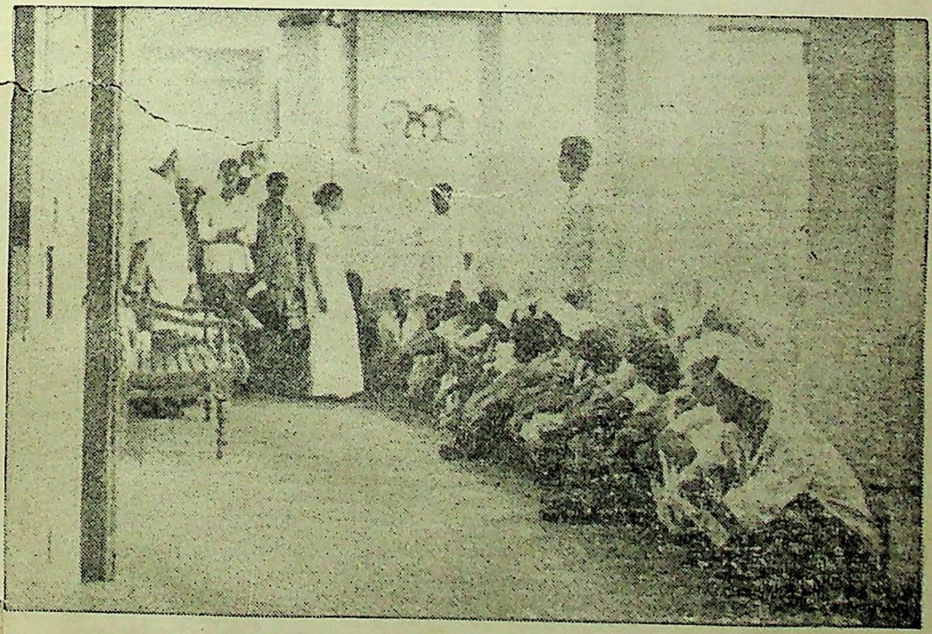

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपोलो–८

चन्द्रमा की ओर और वापस प्रशान्त महासागर में

● वह भी एक क्षण था जब चन्द्रमा की ओर बढ़ते अन्तरिक्षयात्री मार्ग में ही आक्सीजन [समाप्त] हो जाने से समाप्त हो सकते थे। लेकिन वे चन्द्रमा तक पहुँच गये।

● पर एक खतरा और। उनका यान चन्द्रमा की सतह से टकरा सकता था। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। वे चन्द्रमा की परिक्रमा करने लगे।

● और जब वे वहां से लौटने वाले थे तब एक अनहोनी घटना घट सकती थी। वे चन्द्रमा के गुरुत्वाकर्षण से निकल ही न पाते। लेकिन वे पृथ्वी की वापसी यात्रा पर चल पड़े।

● पर पूर्वनिर्धारित कार्यक्रम के अनुसार प्रशान्त महासागर में उनके यान का उतरना भी खतरे से खाली नहीं था।

अपोलो–८ की ऐतिहासिक चन्द्रयात्रा का सचित्र विवरण।

विज्ञान-लोक

के

फरवरी ६९ अंक में

अपनी प्रति आज ही सुरक्षित करा लें या हमें लिखें :

मेहरा न्यूजपेपर्स : हास्पिटल रोड : आगरा–३

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar